

भीतर का आदमी तथा अन्य कहानियाँ

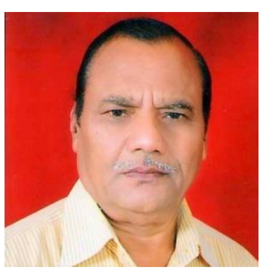
गोवर्धन यादव.

अनुक्रम

1. भीतर का आदमी.
2. शेरदिल औरत
3. अंतिम निर्णय
4. आखिर वह कौन था ?
5. घर वापसी
6. छुटकारा पाना संभव नहीं
7. पलायन
8. भेड़िया
9. लाल कमीज बिल्ला नं.243
10. ये रात फ़िर न आएगी.

परिचय

परिचय



***नाम**--गोवर्धन यादव

***पिता-**. स्व.श्री.भिक्कुलाल यादव

***जन्म स्थान -मुलताई.(जिला) बैतुल.म.प्र.**

*** जन्म तिथि-** 17-7-1944 *शिक्षा - स्नातक

*पांच दशक पूर्व कविताओं के माध्यम से साहित्य-जगत में प्रवेश

*देश की स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का अनवरत प्रकाशन

*आकाशवाणी से रचनाओं का प्रकाशन

*करीब पैतीस कृतियों पर समीक्षाएं

*कृतियाँ * महुआ के वृक्ष (कहानी संग्रह) सतलुज प्रकाशन पंचकुला(हरियाणा)

*तीस बरस घाटी (कहानी संग्रह,) वैभव प्रकाशन रायपुर (छ,ग.)

पीडीएफ ईबुक –गोवर्धन यादव का कहानी संग्रह- महुआ के वृक्ष /पीडीएफ ई बुक// :गोवर्धन यादव का कहानी संग्रह - तीस बरस घाटी /पीआसन अपने-अपने-संग्रह कहानी -बुक ई .एफ़.डी. /पीडीएफ ईबुक – गोवर्धन यादव का कविता संग्रह - बचे हुए समय में /पीडीएफ ईबुक : गोवर्धन यादव का लघुकथा संग्रह / कौमुदी महोत्सव – हमारे तीज त्यौहार /पीडीएफ़- देश-विदेश की यात्राएं / पीडीएफ़-समीक्षा-आलेख की ई-बुक्स / पीडीएफ़-दृष्य की अपेक्षा अदृष्य रहस्यमय होता है/पीडीएफ़- आलेख-मायावी दुनियां/ पीडेएफ़-अकेले नहीं हैं हम / पीडीएफ़-गरजते-बरसते सावन के बीच खनकते गीत और फ़िल्मी दुनियां तथा अन्य आलेख / पीडीएफ़-हिन्दी-देश से परदेश तक तथा अन्य आलेख /पीडीएफ़-कथा साहित्य में म.प्र. का योगदान तथा अन्य आलेख / पीडीएफ़-दसवां विश्व हिन्दी सम्मेलन तथा अन्य आलेख./ पीडीएफ-पर्यावरण पर केन्दीत विशेष आलेख / पीडीएफ़-कहानी पोस्टकार्ड की एवं अन्य आलेख./ पीडीएफ़-ऋषि परम्परा के प्रतीक एवं अन्य आलेख.-

***सम्मान** *म.प्र.हिन्दी साहित्य सम्मेलन छिंन्दवाडा द्वारा”सारस्वत सम्मान”

*राष्ट्रीय राजभाषापीठ इलाहाबाद द्वारा “भारती रत्न “

*साहित्य समिति मुलताई द्वारा” सारस्वत सम्मान”

*सृजन सम्मान रायपुर(छ.ग.)द्वारा” लघुकथा गौरव सम्मान”

*सुरभि साहित्य संस्कृति अकादमी खण्डवा द्वारा कमल सरोवर दुष्यंतकुमार सम्मान

*अखिल भारतीय बालसाहित्य संगोष्टी भीलवाडा(राज.) द्वारा”सृजन सम्मान”

*बालप्रहरी अलमोडा(उत्तरांचल)द्वारा सृजन श्री सम्मान

*साहित्यिक-सांस्कृतिक कला संगम अकादमी परियावां(प्रतापगघ्ह)द्वारा “विद्धावचस्पति स.

*साहित्य मंडल श्रीनाथद्वारा(राज.)द्वारा “हिन्दी भाषा भूषण”सम्मान

*राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा(महाराष्ट्र)द्वारा”विशिष्ठ हिन्दी सेवी सम्मान

*शिव संकल्प साहित्य परिषद नर्मदापुरम होशंगाबाद द्वारा”कथा किरीट”सम्मान “

*तृतीय अंतराष्ट्रीय हिन्दी सम्मेलन बैंकाक(थाईलैण्ड) में “सृजन सम्मान.

*पूर्वोत्तर हिन्दी अकादमी शिलांग(मेघालय) द्वारा”डा.महाराज जैन कृष्ण स्मृति सम्मान.

* मारीशस यात्रा(23-29 मई 2014) कला एवं संस्कृति मंत्री श्री मुखेश्वर मुखी द्वारा सम्मानीत

* साहित्यकार सम्मान समारोह बैतूल में सृजन-साक्षी सम्मान

* विवेकानन्द शैक्षणिक, सांस्कृतिक एवं क्रीडा संस्थान देवघर(झारखण्ड) द्वारा राष्ट्रीय शिखर सम्मान.

* म.प्र.तुलसी साहित्य अकादमी भोपाल द्वारा सम्मानीत-

*अब्युदय बहुउद्देशीय संस्था वर्धा द्वारा मारीशस में सम्मान

*पंचरत्न साहित्यिकी सम्मान, छिन्दवाडा

*मुक्तिबोध स्मृति रचना शिविर, राजनांदगांव द्वारा सम्मानित.

*राष्ट्रीय शिखर सम्मान समारोह देवग्घर(झारखण्ड) द्वारा शिखर सम्मान

*सृजन-सम्मान बहुआयामी सांस्कृति संस्था रायपुर में दसवे अंतरराष्ट्रीय हिन्दी सम्मीलन में सम्मान

***विशेष उपलब्धियाँ**:-औद्धोगिक नीति और संवर्धन विभाग के सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग से संबंधित विषयों तथा गृह मंत्रालय,राजभाषा विभाग द्वारा निर्धारित नीति में सलाह देने के

लिए वाणिज्य और उद्धोग मंत्रालय, उद्धोग भवन नयी दिल्ली में "सदस्य" नामांकित
(2)केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय(मानव संसाधन विकास मंत्रालय) नयी दिल्ली द्वारा_कहानी संग्रह"महुआ के वृक्ष" तथा "तीस बरस घाटी" की खरीद की गई.
(३) कई कहानियाँ का उर्दू, मराठी, राजस्थानी, उडिया, सिंधी, भाषाओं में रुपान्तरित की गईं.

यात्राएं **थाईलैण्ड, इण्डोनेशिया, मलेशिया, बाली, नेपाल, भुटान तथा मारीशस.**

संप्रति **१** **सेवानिवृत पोस्टमास्टर (एच.एस.जी.1)**
२ **संयोजक राष्ट्र भाषा प्रचार समिति जिला इकाई छिंन्दवाड़ा (म.प्र.) 480-001**

संपर्क- मोबाईल 09424356400......8319806243

Email= **yadav.goverdhan@rediffmail.com**
goverdhanyadav44@gmail.com

भीतर का आदमी.

दुनिया का सबसे जटिल और उबाऊ कोई काम हो सकता है तो वह है किसी का इन्तजार करना. इन्तजार करता आदमी ठीक उस सुप्त ज्वालामुखी की तरह होता है जिसके अन्दर विचारों का लावा दहकता रहता है, तरह-तरह की तरंगे-लहरें उठती रहती हैं और जब सहनशीलता की सारी हदें पार हो जाती है तो अचानक फ़ट पड़ता है.

इन दिनों अमरकांत के मन के अन्दर इन्तजार का एक ज्वालामुखी अन्दर ही अन्दर सुलग रहा था. वह हैरान और परेशान है कि सुनीता अब तक क्यों नहीं लौटी, जबकि उसे आज दस बजे घर पहुँच जाना चाहिए था. इस समय दिन के ग्यारह बज रहे हैं. इन्तजार करते-करते उसकी आँखें पथराने लगी और मन के आंगन में शंका और कुशंकाओं के जहरीले नाग फ़न उठाए बिलाबिलाने लगे थे. जाने से पूर्व उसने कहा भी था कि एस.एम.टी. की बस से रवाना होगी, जो ठीक पौने दस बजे यहाँ पहुँच जाती है. कहीं ऎसा तो नहीं कि बस कैंसिल हो गई या फ़िर उसका टायर पंकचर हो गया. कुछ तो हुआ है, अन्यथा अब तक उसे आ ही जाना चाहिए था. अधीर होकर उसने फ़ोन घुमाया. वह जानना चाहता था कि उसे आने में विलम्ब क्यों हो रहा है अथवा उसका अभी लौट आने का मन नहीं हो रहा है?. फ़ोन की घंटी बज रही थी लगातार. फ़िर फ़ोन पर एक आवाज उभरती है "सब्सक्राइबर इज नॉट आन्सरिंग". उसे आश्चर्य हुआ कि आखिर वह फ़ोन क्यों नहीं उठा रही है. फ़ोन रिचार्ज होने लिए स्वीचबोर्ड पर टंगा है या फ़िर संभव है कि फ़ोन इस समय उसकी पहुँच के बाहर है,या फ़िर वह अपना पर्स ले जाना भूल गई? शायद

इसलिए वह फ़ोन अटैण्ड नहीं कर पा रही होगी. उसने फ़िर से नम्बर मिलाया और इन्तजार करने लगा. इस बार भी वही रटा-रटाया जवाब सुनने को मिला. उसकी खीज बढ़ती जा रही थी. उसने अधीर होकर एस.एम.टी के संचालक संतु को फ़ोन लगाया और बस की लोकेशन जानना चाहा कि बस आई भी अथवा नहीं. फ़ोन पर एक स्वर गूंजा- "भाईसाहब..बस तो अपने निर्धारित समय पर कभी की आ चुकी. क्या कोई आने वाला था उससे?". "हाँ भाई हाँ.. मेरी पत्नि उस बस से आने वाली थी और वह अब तक घर नहीं पहुँची, बस उसी का इन्तजार कर रहा था". "हो सकता है कि भाभीजी को बस-स्टैण्ड में आने में देर हो गई हो और बस जा चुकी हो. (उसने समझाते हुए कहा) हर पन्द्रह मिनट पर एक बस यहाँ के लिए रवाना होती है, हो सकता है कि वे किसी दूसरी बस से रवाना हो चुकी हों. और थोड़ा इन्तजार कर लीजिए". एक सांत्वना देने वाला स्वर गूंजा था उस तरफ़ से.

तभी उसने महसूस किया कि उसके अन्दर बैठा एक अजनबी आदमी उछ्लकर उसके सामने वाली कुर्सी में आकर धंस गया है. अमरकांत इस समय कपड़े बदलकर जुराब पहनने के लिए झुका हुआ था. उसे सामने देखकर उसने पूछा- "तुम यहाँ कैसे घुस आए, जबकि दरवाजा अन्दर से बंद है? अखिर तुम हो कौन, क्या नाम है तुम्हारा, कहाँ रहते हो और क्या चाहते हो मुझसे?. उसने एक साँस में कई प्रश्न उछाल दिए थे.

" मुझे यह जानकर आश्चर्य हो रहा है कि तुम मुझे नहीं जानते जबकि मैं तुम्हारा ही अश्क हूँ और तुम्हारे ही भीतर रहता हूँ. मुझे आने-जाने के लिए कोई रोक नहीं सकता. मैं कहीं से भी तुम्हारे सामने प्रकट हो सकता हूँ. मेरे भाई,,, सच मानो...मैं तुम्हारा सच्चा हमदर्द हूँ. तुम्हारे बारे में सब कुछ जानता हूँ. मैं यह भी जानता हूँ कि तुम इस समय अपनी बीबी सुनीता का बेसब्री से इन्तजार कर रहे हो. ठीक कहा न मैंने". उसने अपनी आँखों को गोल-गोल नचाते हुए कहा.

अमरकांत की इच्छा हुई कि उसका टेंटुआ पकड़कर दबा दे ताकि हमेशा-हमेशा के लिए छुटकारा पा जाए क्योंकि वह किसी कुशल जासूस की तरह पिछले माह से उसका पीछा करता आ रहा है और उसकी हर छॊटी-बड़ी बातों और हरकतों को जान जाता है. अपने गुस्से पर नियंत्रण करते हुए उसने अहिस्ता से कहा–"-बंद करो अपनी बकवास और यहाँ से उड़न-छू हो जाओ. वैसे ही मुझे आफ़िस जाने में विलंब हो गया है. मेरे पास बिल्कुल भी समय नहीं है कि मैं तुम्हारी बकवास सुनता रहूँ. समझे तुम". इतना कहकर उसने ताला जड़ दिया. ऎसा करते हुए उसे प्रसन्नता हो रही थी कि उसने उसे भीतर बंद कर दिया है.

बाहर निकलकर उसने अपनी मोटरसाइकिल निकाली. इस समय घड़ी में दिन के साढ़े ग्यारह बज चुके थे, जबकि उसका आफ़िस ग्यारह बजे से शुरू होता है. उसने जेब से मोबाईल निकाला और तत्काल आफ़िस मैनेजर को फ़ोन लगाते कहा कि किसी आवश्यक कार्य के चलते उसे आफ़िस आने में विलंब हो गया है. वह ठीक बारह बजे से पहले आफ़िस पहुँच जाएगा और आधे दिन की कैजुअल-लीव के लिए आवेदन दे देगा.

उसकी मोटरसाइकिल आफ़िस की ओर बढ़ रही थी लगातार. तभी उसने महसूस किया कि वही अजनबी, लगभग हवा मे तैरता हुआ उसके साथ चला आ रहा है. उसे देखकर उसका माथा ठनका. वह सोचने पर मजबूर हो गया कि जिसे मैंने ताले में बंद कर दिया था, बाहर कैसे निकल आया?. वह कुछ और सोच पाता कि उस अजनबी ने कहा-"

दोस्त..बुरा मान गए?. इसमें बुरा मानने जैसी कोई बात ही नहीं थी. मैं अब भी कह रहा हूँ कि इन्तजार-विन्तजार छॊड़ॊ. वह नहीं आने वाली. मैं तुमसे कब से आगाह कर रहा हूँ कि औरत जात पर विश्वास करना नीरी बेवकूफ़ी है. पिछली बार भी तो ऎसा ही हुआ था और इस बार भी वही हो रहा है., लेकिन तुम हो कि उसे सती सावित्री समझे बैठे हो."

वह सरासर उसकी बीबी पर लांछन मढ़ रहा था. सुनते ही उसके क्रोध का पारा चढ़ने लगा था. अब वह गुस्से में फ़ट पड़ा था. उसने लगभग चीखते हुए कहा- "बंद करो अपनी बकवास...तुम कौन होते हो मेरी बीबी पर लांछन मढ़ने वाले?.

" फ़िर तुम नाराज हो गए. सच्ची बात कहना बुरा है क्या. फ़िर एक हमदर्द झूठ का सहारा भला क्यों कर लेगा?. वह कहकर गई थी कि तीन दिन बाद लौट आएगी..फ़िर क्यों नहीं लौटी? तुम बार-बार फ़ोन लगा रहे हो और फ़ोन का हरदम स्वीच ऑफ़ रहना, क्या इस बात का संकेत नहीं है कि उसे तुम्हारी कोई फ़िक्र नहीं है. फ़िक्र रही होती तो फ़ोन लगाती, बतियाती और अपने न आने का कारण भी बतलाती. न तो उसने तुम्हारा फ़ोन उठाया और न ही पलट कर फ़ोन लगाया. मतलब साफ़ है. उसे अपनी नाटक कम्पनी मिल गयी होगी और वह अपने किसी लवर की बाहों में महारानी बनी झूल रही होगी तभी तो......"

"मैंने कहा न ! अपनी बकवास बंद करो और मेरा पीछा छोड़ॊ."

"ठीक है, जैसी तुम्हारी मर्जी. मेरा काम तो तुम्हें आगह करने का था, सो मैंने कर दिया. अच्छा तो अब मैं तुमसे बिदा लेता हूँ". कहकर वह अदृष्य हो गया.

आफ़िस पहुँचकर उसने टेबल की ड्राज से कोरा कागज निकाला. दरखास्त लिखा और चैंबर में घुसते हुए उसने आफ़िस मैनेजर को दिया और अपनी सीट पर आकर जम गया.

अजनबी के द्वारा लगाए गए लाछंनो से उसका दिल छलनी-छलनी हो गया था. बार-बार उसकी नजरों के सामने सुनीता किसी अपराधी की तरह आकर खड़ी हो जाती. उसकी डबडबाई आँखें देखकर साफ़ जाहिर होता है कि वह अपराधी नहीं है. संभव है कि उसकी फ़ेमिली में कोई बीमार पड़ गया हो, यह भी तो संभव है कि वह खुद बीमार पड़ गई हो. यह भी संभव है कि उसका फ़ोन चोरी चला गया हो. निश्चित ही कोई न कोई कारण अवश्य रहा होगा, जिसकी वजह से वह अपने आने अथवा न आने के कारण नहीं बतला पाई. तरह-तरह के विचार उसे उद्वेलित कर जाते. उसे इस बात का तनिक भी ध्यान नहीं रहा कि इस समय वह आफ़िस में बैठा है और उसे अपना काम निपटाना चाहिए.

आफ़िस मैनेजर ने प्यून भेजते हुए उसे तत्काल अपने कैबिन में हाजिर होने की सूचना भिजवाई. "अभी आता हूँ" कहकर वह अपनी जगह बुत बना बैठा रहा. उसे आता न देख खुद मैनेजर उसके चेंबर में जा पहुँचा. वह अपने ही बनाए हुए चक्रव्यूह में इतना अधिक उलझा हुआ था कि उसे पता ही नहीं चल पाया कि मैनेजर साहब ठीक उसके सामने वाली कुर्सी पर विराजमान है.

“क्यों क्या बात है मिस्टर अमरनाथ ! जब काम करना ही नहीं था तो आफ़िस क्यों चले आए ?. शकल-सूरत देखकर तो लगता है तुम आज मैंटली डिसटर्ब हो. घर जाओ और किसी डाक्टर से चेकअप करवाओ. जब तक तुम ठीक नहीं हो जाते, तुम्हें आफ़िस आने की जरुरत नहीं...समझे” डांटते हुए वह उसके केबिन से बाहर निकल गया.

उसका मन किसी काम से जुड़ नहीं पा रहा था. उसने जेब से सिगरेट के पैकेट में से एक सिगरेट निकाली और माचिस चमकाते हुए उसे सुलगाया. गहरे कश खिंचते हुए उसे कुछ राहत सी महसूस हुई. यह उसकी पांचवीं सिगरेट थी. अब तक वह चार सिगरेट फ़ूंक चुका था. किसी तरह समय पास करते हुए वह पांच बजने का इन्तजार करने लगा. पांच बजते ही उसने अपना केबिन छोड़ा. मोटरसाईकिल निकाली और घर की ओर बढ़ चला.

रास्ता चलते हुए उसने अपनी रिस्टवाच पर नजर डाली. शाम के छः बजे थे. अभी से घर जाकर क्या करेगा ?,इस सोच के चलते उसने अपनी मोटरसाईकिल का रुख पार्क की ओर मोड़ दिया. गाड़ी एक ओर रखते हुए वह पार्क के भीतर जाकर एक बेंच पर बैठ गया. अभी पार्क में ज्यादा भीड़ नहीं थी. एक्का-दुक्का बच्चे घसरपट्टी पर खेल रहे थे. चारों तरफ़ हरियाली छाई हुई थी.चारों तरफ़ रंग-बिरंगे फ़ूल खिले हुए थे, जिन पर तितलियाँ मंडरा रही थी. शीतल हवा बह निकली थी. यहाँ आकर उसे कुछ राहत सी महसूस हुई, बावजूद इसके अफ़सर की डाँट का असर अब तक कम नहीं हुआ था. मन अब भी कसैला था.

देर तक बैठे रहने के बाद उसने अपने घर की तरफ़ रुख किया. ताला खोला. घर में प्रवेश किया. अन्दर अन्धकार का साम्राज्य छाया हुआ था. उसने लाईट आन कर दिया. पल भर में रोशनी चारों तरफ़ फ़ैल गयी. जूतों को एक ओर उतारते हुए वह सीधे ड्राईंग रुम में जाकर एक कुर्सी में धंस गया. देखता क्या है कि वही अजनबी आदमी सामने वाली कुर्सी मे बैठा हुआ उसे घूरते हुए मुस्कुरा रहा था. उसे देखते ही वह बमक गया था. “ तुम यहाँ...बंद घर में आखिर तुम घुसे कैसे..निकलो...निकलो...इसी समय तुम घर के बाहर निकल जाओ...जीना हराम कर रखा है तुमने मेरा..नहीं निकले तो मैं तुम्हारा गला घोंट दूगां..जान से मार डालूंगा... समझे”. देखते ही वह लगभग फ़ट सा पड़ा था और वह बेशर्म अब भी मुस्कुरा रहा था.

“ तुममें इतनी हिम्मत है तो मार डालो मुझे... मैं देखता हूँ तुम अपने ही वजूद को कैसे मार सकते हो...लो मैं सामने खड़ा होता हूँ...घोंट दो तुम मेरा गला और मार डालो मुझे.....लेकिन एक बात याद रखना.... मैं मर जाऊँगा लेकिन झूठ नहीं बोलूंगा. मेरी बात अब भी मान लो, वह नहीं आने वाली.. नहीं आने वाली. तुम्हारी जरा सी भी फ़िक्र होती तो अब तक आ गई होती....(कुछ देर बाद). क्यों...गला घोंट देने के लिए तुम्हारे हाथ उठ क्यों नहीं रहे हैं जबकि मैं ठीक तुम्हारे सामने खड़ा हूँ...मैं जानता हूँ तुममे इतनी हिम्मत ही नहीं है कि तुम मेरा गला घोंट दो..अरे..जिसने एक चींटी तक नहीं मारी वह किसी इनसान को कैसे मार सकता है....बुजदिल कहीं के...चलता हूँ सुबह फ़िर मिलूंगा” इतना कहकर वह घर के बाहर निकल गया था.

उस आदमी के चले जाने के बाद उसने राहत की सांस ली.

दिन भर की माथपच्ची के चलते उसका मिजाज अब तक गर्माया हुआ था. सिर में भारीपन अब तक तारी था. उसने अपने कपड़ॆ उतारे. बाथरूम में जाकर शावर के नीचे जा खड़ा हुआ. शावर आन किया, शावर से शरीर पर पड़ने वाली शीतल बूंदें उसे अच्छी लग रही थी. देर तक उसके नीचे खड़े रहने के बाद अब वह तरोताजा महसूस करने लगा था.

नहाने के बाद उसे भूख लग आयी थी. आफ़िस जाने के पहले उसने सुनीता की मनपसंद शिमलामिर्च की भरवां सब्जी, चार परत वाले पराठें, फ़्राई चांवल, दही और पापड तल कर रखे थे. उसे पक्का यकीन था कि वह दस बजे तक घर आ जाएगी, सो साथ बैठकर खाना खाएंगे. इन्तजार करते-करते ग्यारह बज चुके थे और उसके आफ़िस का टाईम भी हो चला था. भूख लगभग समाप्त सी हो गई थी और वह सीधे आफ़िस चला गया था. सुबह का बनाया हुआ भोजन ठंडा पड़ चुका था. स्टोव्ह में उसने खाना गरम किया. खाने बैठा तो खाया नहीं गया. “परसी हुई थाली का अनादर नहीं करना चाहिए”, उसे मां के शब्द याद आ गए. भारी मन से उसने किसी तरह दो पराठें हलक के नीचे उतारे और हाथ धो लिए.

खाना खाकर वह बिस्तर पर आकर पसर गया. बिस्तर पर आते ही सुनीता के साथ बिताए गए एक-एक पल जीवन्त हो उठे. शरीर में एक उत्तेजना सी फ़ैलने लगी. सांसे फ़ूलने सी लगी. आँखों में एक नशा सा चढ़ने लगा था. खाली बिस्तर पाकर उसका सारा नशा पल भर में काफ़ूर हो गया. सब ओर से ध्यान हटाते हुए उसने बिस्तर पर ही पड़े-पड़ॆ टीव्ही. ऑन किया. बाबी फ़िल्म चल रही थी. अब वह उसमें मजा लेने लगा था. फ़िल्म देखते-देखते कब वह नींद की आगोश में चला गया, पता ही नहीं चल पाया.

सुबह सोकर उठा तो पूरा शरीर भारी-भारी सा लगा, किसी तरह उसने बिस्तर छॊड़ा. फ़्रेश होकर नहाया, तब जाकर कुछ अच्छा सा लगा. कुर्सी में धंसते हुए उसने फ़ोन उठाया. नम्बर डायल किया, लेकिन निराशा ही हाथ लगी. फ़िर दूसरा एक विचार मन में आया कि सुनीता के पापा को फ़ोन लगाकर जानकारी ली जाए. “ऎसा करना उचित नहीं होगा” सोचते हुए फ़ोन रख दिया. अब उसने निर्णय ले लिया था कि वह सुनीता को लेकर ज्यादा कुछ नहीं सोचेगा. उसे जब आना होगा तब आ आएगी.

बाहर खटर-पटर की आवाज सुनकर सहसा उसका ध्यान खिड़की पर गया. वह दूसरा आदमी कांच में से भीतर तांक-झांक कर रहा था. “शायद डर के चलते अब वह अन्दर आने की हिम्मत नहीं जुटा पा रहा होगा” उसने सोचा और वह किसी और अन्य काम में मशगूल हो गया.

अचानक उसके फ़ोन की घंटी टनटना उठी. उसने यह सोचते हुए लपककर फ़ोन उठाया कि सुनीता का ही फ़ोन होगा. लेकिन दूसरी तरफ़ से आती आवाज किसी मर्द की थी. कुछ कहने से पहले उन्होंने अपना परिचय देते हुए बतलाया -“ दामादजी...मैं दामोदर बोल रहा हूँ..मंजू का पिता. शायद आप मुझे नहीं जानते. जानेगें भी कैसे? आपका यहाँ आना काफ़ी कम ही रहा है न ! इसलिए आपसे मेरा परिचय नहीं हो पाया. मंजू और सुनीता बचपन की सहेलियाँ हैं. आप यह समझ लें की दो जिस्म और एक जान है वे दोनों. जिस दिन सुनीता जाने की सोच रही थी, उसी दिन मंजू को डेलेवरी के लिए हास्पिटल में भरती किया गया. डाक्टर ने बतलाया कि बच्चा उसकी अंतड़ियों में

फ़ंस गया है, अतः तत्काल आपरेशन करना होगा, सुनीता भी उसके साथ ही थी. खैर किसी तरह डिलेवरी हुई. पोता पैदा हुआ लेकिन मंजू की ब्लिडिंग नहीं रुक पा रही थी. उसकी जान खतरे में थी, उसे तत्काल नागपुर ले जाया गया. मैं ठहरा एक अपाहिज, चल-फ़िर नहीं सकता. घर में अन्य कोई मेंबर न होने के कारण सुनीता को उसके साथ जाना पड़ा. करीब सप्ताह भर उसे वहाँ रुकना पड़ा. इतना सुनने के बाद भी आपके मन में एक प्रश्न जरुर उठ खड़ा हो गया होगा कि सुनीता ने आपको फ़ोन क्यों नहीं लगाया? मैं भी आपको फ़ोन पर इस बाबत सूचना नहीं दे पाया. हालात ही कुछ ऎसे बन पड़े थे जिसका बयान मैं नहीं कर सकता. अगर सुनीता न होती तो शायद ही मेरी बेटी की जान बच पाती ? बेटा...मैं तुम्हारा गुनहगार हूँ...मुझे माफ़ कर दो. (अपनी व्यथा-कथा सुनाते हुए दामोदर जी फ़बक कर रो पड़े थे. उनके सिसकने की आवाज फ़ोन पर स्पष्ट रूप से आ रही थी). बेटा...तुम्हें अकारण इतने दिनों तक कष्ट उठाना पड़ा, मुझे माफ़ कर दो. मेरा विश्वास है कि आप सुनीता को भी माफ़ कर देगें."

" इतनी बड़ी घटना घट गई और आपने मुझे सूचित करना तक उचित नहीं समझा ? काश मुझे इस बाबत सूचना मिल जाती तो मैं भी वहां चला आता....आपकी मदद करता...आपका सहायक ही सिद्ध होता"

"आपकी शिकायत उचित है बेटे, लेकिन हालात ही कुछ ऎसे बन पड़े थे कि हम सबकी सांसे थम सी गई थी. जिन्दगी और मौत के बीच झुलती मेरी बच्ची यदि आज जीवित है तो उसका सारा श्रेय सुनीता बेटी को जाता है. मेरा आपसे पुनः अनुरोध है कि आप उसे माफ़ कर देगें"

इसके बाद कहने-सुनने को कुछ बचा ही नहीं था. हफ़्ता-दस दिन के भीतर दिल के आंगन में जमीं कलुषित भावनाओं की काई पिघलकर, आँखों के रास्ते बहने लगी थी. सुनीता के प्रति उठे नफ़रत के ज्वारभाट अब तिरोहित होने लगे थे. मन में एक अजीब शांति सी महसूस होने लगी थी और सुनीता के प्रति प्यार के बादल उमड़-घुमड़कर उसके दिल और दिमाक पर छाने लगे थे. दूसरे ही पल, उसे उस भीतर के आदमी पर क्रोध आने लगा था. "यह तो अच्छा ही हुआ कि वह उसकी बातों में नहीं आया वरना अनर्थ हो जाता. शंका की एक छॊटी सी चिंगारी उसके आशियां को जलाकर खाक कर देती" उसने सोचा.

दिल और दिमाक पर छाया बोझ उतर गया था. अब वह अपने आपको तरोताजा सा महसूस करने लगा था. उसने झट से शेव किया, नहाया और आफ़िस चला गया.

फ़ोन पर सूचना देते हुए सुनीता ने बतलाया कि वह लौट आयी है. बात को आगे बढ़ाते हुए उसने शाम को जल्दी घर आने का आग्रह भी किया था उसने.

सुनीता के आगमन की बात सुनते ही उसके मन के सूने आंगन में वसन्त उतर आया था, कोयल कुहकने लगी थी और लाखों फ़ूल एकाएक खिल उठे थे. "जी अच्छा जी" कहते हुए उसने फ़ोन काट दिया था.

पहाड़ सा भारी दिन कैसे कट गया, पता ही नहीं चल पाया. पांच बजते ही वह अपने केबिन से बाहर निकला. मोटरसाईकिल स्टार्ट की और अब वह किसी फ़िल्मी हीरों की तरह गीत गुनगुनाता, सीटी बजाता घर की ओर चला जा रहा था.

रास्ता चलते उसने सोचा- सुनीता ने उसे इतने दिनों तक खूब तड़पाया है, इन्तजार करवाया है, क्यों न थोड़ा विलंब से घर पहुँचा जाय. इस ख्याल के आते ही उसने अपनी मोटरसाईकिल की दिशा बदल दी. यहाँ-वहाँ के चक्कर लगाने के बाद अब वह पालिका-मार्केट में जा घुसा. उसने सुनीता के पसन्द की तरह-तरह की मिठाइयाँ खरीदी, मोगरे के फ़ूलों का गजरा खरीदा, एक बुके लिया और लौट पड़ा.

उसकी चाल में एक विश्व विजेता की सी उछाल थी और मन किसी पंछी की तरह चहचहा रहा था. घर पहुँचते ही उसकी अंगुली कालबेल पर जा पहुँची. कालबेल के बजते ही जल-तरंग की स्वर-लहरी तरंगित होने लगी. सुनीता ने दरवाजा खोला. एक मादक मुस्कुराहट बिखेरते हुए सुनीता ने उसका स्वागत किया. अमरनाथ ने गुलदस्ता देते हुए उसे अपनी बाहों में कैद कर लिया और ढेरों सारा चुम्बक उसके गालों पर जड़ दिया. बाहों के घेरे में दोनों देर तक अविचल खड़े रहे.

दामोदर जी से सारी हकीकत जान चुकने के बाद शिकवे-शिकायत की बात छॆड़ना उसे उचित नहीं लगा. वह जानता था कि ऎसा किए जाने से हसीन रात खराब हो सकती है. किचन से उठकर दोनों बेडरूम में चले आए.

कमरे में प्रवेश करते ही सबसे पहले उसकी नजर बिस्तर पर पड़ी. चादर पर सुर्ख लाल गुलाब की महकती पंखुड़ियाँ बिखरी हुई थी. पूरे कमरे में फ़्रेशनेस का छिड़काव कर दिया गया था और एक कोने में फ़्रेगनेंट अगरबत्ती सुलग रही थी. मन ही मन वह सुनीता की तारीफ़ किए बिना न रह सका था. शायद सुनीता जानती थी कि रात को किस तरह खुशनुमा और रंगीन बनाया जा सकता है. उसने सोचा.

बिना समय गवाएँ उसने उसे अपनी बाहों में उठाकर बिस्तर पर लिटा दिया और वह उस पर झुकने ही वाला था कि उसे भीतर के आदमी की याद हो आयी. अमरकांत नहीं चाहता था कि वह किसी विलियन की तरह बीच में टपककर कीमती पलों को बर्बाद कर दे. उसने देखा खिड़की पर पड़ा पर्दा खुला रह गया है, संभव है कि अन्दर तांक-झांक करने लगे. उसका शक सही निकला. पता नहीं वह कब आ धमका था और पर्दे की ओट से अन्दर झांक रहा था. वह चुपचाप से उठा. पर्दे को ठीक किया और कमरे में जल रही बत्ती बुझा दिया. अब वह निश्चिंत होकर स्वर्गीय आनन्द ले सकता था.

<u>(2) शेर दिल औरत</u>

“आदमी अपना काम समय पर पूरा करे अथवा न भी करे, तो कोई फ़र्क नहीं पड़ता, लेकिन प्रकृति अपना काम समय पर ही करती है. यदि वह अपने काम में थोड़ी सी भी ढील दे दे तो सारा चक्र गड़बड़ा जाएगा और पृथ्वी पर तरह-तरह के संकट मंडराने लगेंगे.”

आकाश में मंडराते बादलों को देखकर रोहित सोचने लगा था. अभी कुछ समय पहले तक आकाश एकदम साफ़ था, किसी कोरी स्लेट की तरह. और देखते ही देखते समुचे आकाश पटल पर बादलों के धमाचौकड़ी शुरु हो गई थी. वह अपने घर से आफ़िस जाने के लिए तैयार ही बैठा था. सुबह के साढ़े आठ बज चुके थे. आराम से मोटर साईकिल चलाते हुए उसे दफ़्तर पहुंचने में लगभग एक से सवा घंटा लग जाता है. यदि वह इस समय तक नहीं निकला तो आफ़िस समय से नहीं पहुंच सकता. फ़िर दिल्ली के सड़कों पर मोटर साईकिल चलाना कोई आसान काम भी तो है नहीं. पता नहीं कहां जाम लग जाए ? पता नहीं कब कोई आकर भिड़ जाए, और आपको स्वर्गलोग की टिकिट थमा दे... कुछ भी नहीं कहा जा सकता.

बारिश होने के अभी कोई चांस नहीं थे, फ़िर भी उसने अपनी मोटर साईकिल में बरसाती रख लिया था. बस उसे इन्तजार था अपनी पत्नि का कि कब वह टिफ़िन लेकर रसोई घर से बाहर निकलती है. उसे ज्यादा इन्तजार नहीं करना पड़ा. वह कुछ और सोचे इससे पहले वह मुस्कुराती हुई बाहर आयी और उसने टिफ़िन उसके हाथ में थमा दिया.

रोहित ने अपनी मोटर साईकिल स्टार्ट की और चल पड़ा. मोटर साईकिल के शीशे में उसने पत्नि को देखा जो हाथ हिला रही थी. घर से निकलते समय सुनन्दा उसे मुस्कुराते हुए बिदा करती है. कभी-कभी बच्चों अथवा माताजी की अनुपस्थिति में वह उसके गाल पर चुम्बक भी जड़ देती है. पूरा दिन कब गौरैया की तरह फ़ुर्र से उड़ जाता है, पता ही नहीं चलता. शाम तो घर लौटने पर भी वह उसी तरह मुस्कुरा कर उसका स्वागत करती है.

रोहित अपने घर की गली से मुड़ गया. आगे बस स्टाप था. इस समय तक वह खाली था. शायद कुछ देर पहले बस सवारियों को भर कर ले गई थी.

वह कुछ आगे बढ़ ही पाया था कि रेड सिगनल देखकर उसे अपनी गाड़ी रोकनी पड़ी. कुछ देर इन्तजार करने के बाद ग्रीन लाईट होते ही वह आगे बढ़ने वाला ही था, तभी एक बदहवास-सी औरत उसके पास आयी और बोली-" प्लीज एक्सक्यूज मी ....मेरी बस निकल गई है. क्या आप मुझे ग्रीन पार्क तक लिफ़्ट दें सकेंगे?.

रोहित की खोजी नजरों ने कुछ ही पलों में उसके सिर से लेकर पांव तक का मुआयना कर लिया था. गजब की खूबसूरत थी वह महिला. लगता है कि विधाता ने उसे फ़ुर्सद के क्षणों में बनाया होगा. मांग में सिन्दूर और माथे पर मैरुन रंग की बिंदिया देखकर सहज ही अन्दाजा हो जाता है कि वह शादी शुदा है. फ़िर उसके कपड़े पहिनने का ढंग और बोलचाल से ही साफ़ पता चल जाता है कि वह किसी संभ्रात परिवार से ताल्लुक रखती है. उसने सोचा.

" बैठिए" कहते हुए उसने मोटर साईकिल आगे बढ़ा दी थी.

" आपको कैसे पता कि मैं उधर ही जा रहा हूँ " उसने विस्मय से कहा.

" मैने आपको कई बार उधर ही जाता देखा है" वह औरत बोली.

“ अच्छा तो आप आते-जाते लोगों पर नजर रखती हैं तभी तो ! लेकिन मुझे इस बात पर ताज्जुब हो रहा है कि आपको केवल और केवल मेरी ही सूरत याद रही जबकि इस रास्ते न जाने कितने ही लोग गुजरते होंगे?

“ जी नहीं....आपका यह कहना सरासर गलत है कि मैं आते-जाते मर्दों पर नजर रखती हूँ. इस भाग-दौड़ भरी जिन्दगी में भला किसको इतनी फ़ुर्सद है कि वह किसी पर नजर रख सके और उसे याद भी रखे”.

“मान गया कि आप सच कह रही हैं,लेकिन हजार सूरतों मे केवल मेरी ही सूरत आपको याद रही. यह कैसे हो सकता है?”

“ इसका उत्तर एकदम सीधा-सादा सा है. आफ़िस से निकल कर इसी जगह पर खड़े रहकर मुझे बस का इन्तजार करना पड़ता है और इसी जगह पर मैंने आपको प्रतिदिन पान के खोके पर सिगरेट पीते देखा है. आप जिस मस्ती के साथ सिगरेट के धुएं के छल्ले बना कर उड़ाते हैं, उसे देखते रहना मुझे अच्छा लगा था. शायद यही कारण था कि आपकी सूरत मुझे याद रह गई, वरना कौन किसको याद रखता है”. उसने कहा.

“ चलिए...किसी खास अंदाज की वजह से आपको मेरी सूरत याद रही. इसके लिए धन्यवाद. फ़िर भी मैं आपसे जानना चाहता हूँ एक अंजान और अपरिचित व्यक्ति से लिफ़्ट मांगते समय आपको डर नहीं लगा? आपने कैसे अंदाज लगा लिया कि मैं निहायत ही शरीफ़ आदमी हूँ ?”.

“ किसी पराए मर्द के साथ मोटरसाइकिल पर जाने के लिए बड़ा दिल चाहिए जनाव. मैं एक औरत हूँ और कोई औरत पराए मर्द के साथ बैठे, बड़ा हिम्मत का काम है. शायद आप जानते ही होंगे कि ईश्वर ने औरत जात को एक छटी इंद्रिय भी दी है जो आदमी के देखने मात्र से समझ जाती हैं कि उसके मन में किस तरह की उथल-पुथल हो रही है. इस बीच वह अपने बचाव का रास्ता तलाश लेती हैं”

“ मान गए आपको और आपकी पारखी नजरों को. खैर जो भी हो ..मुझे इस बात को जानकर खुशी हुई कि मैं एक शरीफ़ आदमी हूँ तभी तो एक अपरिचित महिला ने मुझ पर विश्वास किया. लेकिन आपने अब तक नहीं बताया कि आप ग्रीन पार्क क्यों जाना चाहती हैं. क्या वहाँ आपका फ़्लैट है अथवा कोई सगा-सम्बन्धी वहां रहता है? उसने पूछा.

“ नहीं...नहीं ऎसा-वैसा कुछ नहीं है. दरअसल मैं वहाँ एक गारमेन्ट फ़ैक्टरी में सुपरवाईजर हूँ.”

“जानकर खुशी हुई. अब कृपया अपना नाम भी बतला दें ?(कुछ हंसते हुए)..वैसे मैंने ही कब आपको अपना नाम बतला दिया. ?. जी..मेरा नाम रोहित है और मैं महरौली में एक ऎड कम्पनी में सी.ई.ओ के पद पर काम करता हूँ”..

“ जी... तीन अक्षरों का मेरा छोटा सा नाम है “माधुरी”. अपना नाम बतलाने के ठीक बाद उसने सहमते हुए कहा-
“ थोड़ा धीरे चलाईए न गाड़ी... तेज रफ़्तार से मुझे डर लगता है.”

“ थोड़ा आसमान के तरफ़ भी देखिए...बादल गरजने लगे हैं..यदि बारिश शुरु हो गई तो हमारे पास बचने का कोई साधन नहीं है”.

“ ठीक कह रहे हैं आप, लेकिन सड़क का हाल भी तो देखिए...जगह-जगह गड्ढे हैं..कहीं बैलेंस गड़बड़ा गया तो हाथ-पैर टूटना तय है. मैं रोज ही एक्सीडेन्ट के केसों को देखती आ रही हूँ ...स्पीड के चक्कर में लोग दुर्घटना के शिकार हो जाते हैं और चार छः महिने के लिए बिस्तर से लग जाते हैं . कितना कष्टप्रद होता है बिस्तर पर पडे रहना. शायद आपने इसकी कल्पना तक नहीं की होगी “?.

“ बिलकुल ठीक कहा आपने... हार्दिक धन्यवाद आपका” कहते हुए उसने स्पीड कम कर दी थी.

“ आपने अपने पति के बारे में कुछ नहीं बताया”.

“ जी...कई खूबियां हैं उनमें...साथ ही वे एक अच्छे आर्टिस्ट के साथ फ़ोटोग्राफ़र भी है. उनका अपना स्टुडियो भी है.”

“ तब तो उन्होंने आपके पोर्ट्रेट भी खूब बनाये होंगे”.

“ सीधी सी बात है. जब बीबी हसीन हो तो उसे ड्राईंग शीट पर उतारना कौन नहीं चाहेगा. कभी घर तशरीफ़ लाइयेगा. आप स्वयं जब अपनी आंखों से देखेगें तो देखते रह जाएंगे”.

“ मैं जितने भी आर्टिस्टों को जानता हूँ, वे सभी मस्त तबियत के लोग होते हैं. उनमें एक खासियत यह भी होती है कि (जरा झिझकते हुए) कि वे ड्रिंग्स के बड़े शौकीन होते हैं”

“इसमें आश्चर्य की कौन सी बात है. शराबनोशी कोई बुरी चीज नहें है, बशर्ते वह अपनी मर्यादा में रहे”

“ खैर... मुझे तो अब तक इसकी लत लग नहीं पायी. अब आपसे मुलाकात हो ही गई है मैं एक बार जरुर आपके आर्टिस्ट से मिलने कभी भी आ धमकूंगा.”

“जी....जरुर तशरीफ़ लाईए.

“ अच्छा खासा कमा भी लेते होंगे?”.

“हाँ...इतना तो वो कमा ही लेते कि घर-गृहस्थी आराम से चल जाती है”.

“ फ़िर तो आपको नौकरी करने की जरुरत ही नहीं होनी चाहिए”

“ आपने ठीक फ़र्माया. लेकिन वे इन दिनों बिमार चल रहे हैं. स्टुडियो भी बंद पड़ा है. आमदनी नहीं के बराबर है. ऎसे में घर खर्च चलाना मुश्किल हो रहा था. यह अच्छा ही हुआ कि शादी से पहले मैंने ड्रेस डिजाईनर का कोर्स कर लिया था जो आज काम आ रहा है.

“ यह सुनकर बड़ा दुख हुआ. मैं आपके किसी काम आ सकूं तो कृपया मुझे बतलाइयेगा अवश्य. जितना भी संभव हो सकेगा मैं आपकी सच्चे मन से मदद करुंगा”. (कुछ देर तक खामोश ओढ़े रहने के बाद उसने कहा) पति बिमार पड़े हैं और आप उनको अकेला छोड़कर नौकरी पर निकल जाती हैं तो उनकी देखभाल कौन करता होगा? बच्चे भी तो होंगे आपके?”.

“ जी हाँ..एक बेटा और एक बेटी है. मयंक ऎट्थ में है और ऋचा सिक्स्थ में. दोनों बच्चे बड़े समझदार हैं. उन्हें कुछ बतलाने की आवश्यक्ता नहीं पड़ती....अपना काम खुद कर लेते हैं. सुबह मैं उनके लिए टिफ़िन तैयार कर देती हूँ. स्कूल की बस आ जाती है, वे उससे निकल जाते हैं. दोनों शाम को घर लौटते हैं. रही उनकी बात तो आफ़िस से निकलने से पहले मैं उनकी सारी आवश्यकताओं की पूर्ति कर देती हूँ. वे अब इस लायक तो हो ही गए हैं कि छोटा-मोटा काम वे खुद कर लेते हैं. मेरे एबसेन्ट में टीव्ही उनका साथ देती है, किसी तरह उनका समय पास हो जाता है....

“ जिसकी बीबी इतनी खूबसूरत हो और वह एक लंबे समय तक घर से बाहर रहे तो पति के मन में शंका-कुशंका के बीज भी तो पनपते ही होंगे कि कहीं वह किसी के साथ फ़्लर्ट तो नहीं कर रहीं ?.”

“ संभव है, ऎसा भी हो सकता है....और नहीं भी हो सकता है.... शरीर से बिमार आदमी मन-मस्तिस्क से भी बिमार हो, यह जरुरी नहीं, फ़िर भी सच तो यही है कि आदम जात ने आज तक अपनी जीवन संगनी पर भरोसा ही कब किया है? वह खुद चाहे जितना गिरा हुआ क्यों न हो, लेकिन वह अपनी बीबी को लेकर शंका-कुशंकाओं को अपने मन में पाले रहता है. खैर... मैं इसकी चिंता नहीं करती..और मुझे करनी भी नहीं चाहिए. जब एक औरत घर से निकलती है तो यह जरुरी नहीं कि उसका सामना किसी दरिंदे से ही होगा.. उसे अच्छे-भले लोग भी तो मिलते हैं, जैसे की आप.”

“ एक बात बतलाईए....आपकी छुट्टी कब होती है?

“ छुट्टी तो छः बजे होती है,लेकिन निकलते-निकलते साढ़े छः तो बज ही जाते है. आखिर ये सब क्यों पूछ रहे हैं आप?

“ बस यूंहि...इसी समय तक मेरी भी ड्यूटी आफ़ हो जाती है, आप चाहें तो इसी जगह पर मेरा इन्तजार कर सकती हैं. मुझे अच्छा लगेगा कि आप मेरे साथ ही लौटें”.

“ मुझे ऎसा लगता है कि आप मुझमें कुछ ज्यादा ही इंट्रेस्ट लेने लगे हैं.” उसने कहा.

“ नहीं...नहीं. ऎसा कुछ भी नहीं है शायद आपने मेरे कहने का गलत मतलब निकाल लिया है. मेरा आशय और कुछ नहीं था, दरअसल मैं नहीं चाहता कि आप बस से सफ़र करें.. यह वह वक्त होता है जब सारे कार्यालय बंद होने को होते हैं. सभी जल्दी ही घर लौटना चाहते हैं और यही कारण है कि शाम के वक्त बसों में कुछ ज्यादा ही

भीड़ हो जाती है. कुछ मजनू टाईप के लोग भी इसमें सफ़र कर रहे होते हैं. किसी खूबसूरत युवती के जिस्म से चिपकने का इससे अच्छा मौका उन्हें कब मिल पाता है. मैं नहीं चाहता कि आप उस भीड़ का हिस्सा बनें.

बात अभी पूरी भी नहीं हो पायी थे कब ग्रीन पार्क आ गया, पता ही नहीं चल पाया.

"जी बस यहीं रुक जाइये" उसने अजीजी से कहा.

मोटर साईकिल से उतरकर वह सामने आ गई. होंठों पर मुस्कान ओढ़ते हुए उसने कहा "आपका बहुत-बहुत शुक्रिया. शाम को फ़िर मिलते हैं. मैं आपका इसी जगह पर इन्तजार करुंगी.". उसके इस अंदाज में यकीन और अपनापन साफ़ झलक रहा था.

" जी बहुत अच्छा. अब मैं चलता हूँ". उसने अपनी मोटर साइकिल आगे बढ़ाते हुए हाथ हिलाते हुए कहा.

मोटर साइकिल के शीशे में उसका अक्स दिख रहा था. वह अब भी हाथ हिलाकर उसका अभिवादन कर रही थी.

रोहित के जेहन में दिन भर माधुरी की मदहोश कर देने वाली सूरत तैरती रही.

दिन कैसे कट गया, पता ही नहीं चल पाया. आफ़िस से निकलकर वह उस स्थान पर आकर खड़ा हो गया, जहां उसने उसे सुबह के समय छोड़ा था. उसे ज्यादा देर तक इन्तजार करने की जरुरत नहीं पड़ी. वह ठीक छः पच्चीस पर वहां पहुंच गई थी. उसने आगे बढ़कर रोहित का मुस्कुरा कर अभिवादन किया और मोटरसाइकिल पर सवार हो गई. मोटरसाइकिल स्टार्ट करने से पहले उसने अपना विजिटिंग कार्ड थमाते हुए कहा- "इसे रख लीजिए, कभी भी जरुरत पड़ सकती है".

उस दिन के बाद से वह ठीक समय पर उस जगह पर खड़ी मिलती, जहां रोहित से वह पहली बार मिली थी. इसी तरह शाम को भी वह उसी जगह पर खड़ी रहकर उसकी प्रतिक्षा करती रहती. कई दिनों तक यह क्रम चलता रहा.

रोहित अपने घर से निकला. गली के उस छोर पर वह नहीं मिली. बस स्टाप या तो खाली होता या फ़िर 9 बजे जाने वाली बस के इंतजार में 4-6 लोग खड़े दिखाई देते. वह सोचता, शायद उसे कोई दूसरा लिफ़्ट देने वाला मिल जाता हो और वह उसके साथ निकल जाती हो. फ़िर वह सोचता, "ऎसा नहीं हो सकता".

एक-एक करके काफ़ी दिन बीत गए, पर वह नही मिली. बावजूद इसके वह छोर वाले बस स्टाप के पास अपनी गाड़ी धीमी कर लेता कि शायद वह खड़ी हो. शाम को भी यही क्रम दोहराता, लेकिन निराशा ही हाथ लगती.

मोटरसाइकिल चलाते समय उसके जेहन में माधुरी की मधुर स्मृतियां तैरती रहती. कभी-कभी तो वह उससे बातें भी करने लगता था लेकिन जल्दी ही उसे इस बात का भान हो जाता कि वह अब उसके साथ नहीं है. अक्सर माधुरी की कही बातें उसके कानों में गूंजने लगती-" किसी पराए मर्द के साथ मोटरसाइकिल पर जाने के लिए बड़ा दिल चाहिए जनाब. मैं एक औरत हूँ और कोई औरत पराए मर्द के साथ बैठे, बड़ा हिम्मत का काम है. "ईश्वर ने हम औरतों को अलग से छटी इंद्री दी है जो आदमी को देखते ही समझ जाती हैं कि उसके मन में क्या पाप पल रहा

है". कभी-कभार जब उसकी गाड़ी की स्पीड ज्यादा हो जाती तो वे सारे शब्द उसके कानों में गूंजने लगते-"मुझे स्पीड से डर लगता है, थोड़ा धीरे चलाएं" और वह अपनी स्पीड कम कर लेता.

दिन पर दिन गुजरते चले गए,लेकिन वह दुबारा नहीं मिली. इस बीच यमुना से काफ़ी पानी बह चुका था. समय भी कब किसके लिए रुका है जो उसके लिए रुकता. अब वह सेवानिवृत हो चुका था. जिस रास्ते पर चलते हुए उसने अपने जीवन के सैतीस साल गुजार दिए थे, उस रास्ते पर फ़िर कभी उसका जाना न हो सका,लेकिन माधुरी की याद उसके मन में जस की तस बनी रही.

उसके बेटे ने फ़ोर व्हीलर खरीद ली थी, जिसके लिए गैराज में कुछ ज्यादा जगह की आवश्यकता पड़ती थी. उसने एक दिन अपने पापा को सलाह देते हुए कहा कि अब उन्हें मोटरसाइकिल बेच देनी चाहिए. सुनते ही वह भड़क गया था. उसने ऎसा करने से साफ़ मना कर दिया था. वह किसी भी कीमत पर उसे बेचने को तैयार नहीं था, क्योंकि उस मोटरसाइकिल से माधुरी की मधुर स्मृतियां जुड़ी हुई थी.

टेलीफ़ोन की घंटी बज रही थी लगातार, जिसे उसके पोते ने उठाया, जो उस समय पास ही खेल रहा था. एक आवाज उभरी-" क्या रोहितजी घर पर हैं, जरा उनसे बात करवाइये". उसने वहीं से अपने दादाजी को आवाज देते हुए कहा-" दद्दुजी..आपका फ़ोन".

" कौन हो सकता है इस समय."..सोचते हुए उसने क्रैडल उठाया. एक सुरमई आवाज सुनकर वह चौंक पड़ा था. वह आवाज माधुरी की थी. सुनते ही अवाक रह गया था वह." माधुरी तुम.....कहां थीं अब तक तुम. मैं बरसों तक तुम्हारे आने का इंतजार करते रहा..लेकिन तुम न जाने कहां खो गई थीं... वह कुछ और कह पाता कि दूसरी ओर से आवाज उभरी-" सारे शिकवे-शिकायत बाद में सुनूंगी रोहितजी... पहले ये सुनिए कि कल ठीक ग्यारह बजे आप प्रगति मैदान पहुंच जाएं, देश के महामहिम राष्ट्रपति जी मुझे सम्मानित करेगें. आपकी उपस्थिति प्रार्थनीय है. यदि आप नहीं पहुंचे तो शायद मैं सम्मान ग्रहण नहीं कर पाउंगी. मैंने रिसेप्शन काउन्टर पर आपके लिए गेटपास का इन्तजाम करवा दिया है. फ्रंट वाली सीट नम्बर **आठ** आपके लिए आरक्षित है. सीट नम्बर **आठ**...ध्यान रखियेगा". इतना कहकर उसने टेलीफ़ोन काट दिया.

रोहित के बूढ़े शरीर में एक नया जोश, एक नयी उमंग का संचार होने लगा था. इस अतिरेक आनन्द से वह सराबोर हुआ जा रहा था. उसकी समझ में नहीं आ रहा थी कि कल ऎसा कौन-सा विशेष दिन है, जब वह राष्ट्रपतिजी के हाथों सम्मानित होगी. उसने कैलेण्डर को ध्यान से देखा. समझ गया था कि कल "अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस" है. यह वह दिन होता है जब किसी विशिष्ट कार्य के संपादित किए जाने पर उस महिला का सम्मान किया जाता है.

उसके जेहन में केवल प्रश्नों की भरमार थी,जिसके उत्तर वह खोजने का असफ़ल प्रयास करता रहा था, लेकिन किसी नतीजे पर पहुंच नहीं पाया था.

दूसरे दिन वह समय से पहले ही घर से निकल गया था. काउन्टर पर पहुंचते ही उसे गेटपास दे दिया गया था. इस समय पूरा हाल खचाखच भरा हुआ था. चारों तरफ़ भीड़ ही भीड़ थी. भीड़ को चीरता हुआ वह अपनी सीट पर जा कर बैठ गया. अब उसे इन्तजार था उस क्षण का, जब वह अपनी आंखों से माधुरी को सम्मानित होते हुए देखेगा. प्रसन्नता की लहरें उसके मन में हिलोरे ले रही थीं.

महामहिम पधार चुके थे. उनके स्वागत-सत्कार के बाद सम्मान देने का कार्यक्रम शुरु हुआ. हर उस महिला के नाम की घोषणा होती,जिन्हें सम्मानित किया जाना था. तीसरे क्रम में माधुरी के नाम की घोषणा हुई. मंच पर वह किसी चमकदार हीरे की तरह अपनी चमक बिखेरते हुए आयी. आगे बढकर उसने महामहिम से सम्मान प्राप्त किया और प्रसन्न बदन उपस्थित जन समुदाय का झुककर अभिवादन किया.

कार्यक्रम की समाप्ति के बाद उसकी भेंट माधुरी से हुई. मिलते ही उसने उसे सम्मानित होने के लिए बधाइयां और शुभकामनाएं दीं और उसके रहस्यमय तरीके से गायब हो जाने के बाबत जानकारी जाननी चाही. .

माधुरी ने ध्यान पूर्वक सुना और विनम्रता पूर्वक बोली-“ रोहितजी...अतीत में जाकर क्या करेगें? अतीत को अतीत ही रहने दें, तो अच्छा हे”.

’ मतलब साफ़ है कि तुम मुझसे कुछ छिपाना चाहती हो. सच है....आखिर मैं होता भी कौन हूँ तुम्हारा...मात्र एक प्रशंसक और क्या?”

“ नहीं ऎसी बात नहीं है रोहितजी... सुनकर भी क्या करेगें...केवल दुख ही होगा आपको..”.

“ दुख और सुख की बात नहीं है माधुरी.... मैं तो केवल इतना भर जानना चाहता हूँ कि यदि तुम्हें शहर छोड़ कर जाना ही था तो मुझे बतला तो दिया होता. तुम्हारे इंतजार में मैंने मन के कितने आघात सहे हैं, क्या तुम इसकी कल्पना कर सकती हो?. एक दिन तो मैं तुम्हारी फ़र्म का पता लगाते-लगाते वहां तक जा पहुंचा था. जाकर पता चला कि तुमने नौकरी छॊड़ दी है. नौकरी छॊड़ने का कोई कारण भी नहीं बतलाया गया. यदि घर का पता तुमने दिया होता तो वहां भी मै जाकर पता लगाता. न तो मेरे पास तुम्हारा मोबाईल नंबर ही था. हमारी मुलाकातें मात्र चंद महिनों की थी, लेकिन तुम इतनी अजीज हो जाओगी, इसका मुझे गुमान तक न था. फ़िर तुम्हारी बसी-बसाई गिरस्थी थी...बच्चे थे..क्या तुम उन्हें साथ ले गई थीं या फ़िर उन्हें छोडकर चली गई थीं ? बोलो-....बोलो माधुरी...तुम्हें मेरे प्रश्नों का उत्तर देना ही होगा. मैं सब कुछ जानना चाहता हूँ तुम्हारे बारे में”. रोहित ने मन के आंगन में फ़न फ़ैलाए बिलबिलाते शिकायती नागों का पिटारा खोल दिया था.

प्रश्नों का आघात इतना तीव्र था कि उसके आंखों से आंसू झरकर बहने लगे. किसी तरह अपने पर संयम रखते हुए उसने कहा-“ रोहितजी मैं आपके मन की पीड़ा को समझ रही हूँ. फ़िर आपका अधिकार भी बनता है मेरे बारे में जानने का...लेकिन यह स्थान इसके लिए उपयुक्त नहीं है. मैं “सैण्ड एंड सन” होटल में रुकी हुई हूँ. आप कृपया वहां आ सकेगें तो मेहरबानी होगी. मैं आपको अपना वर्तमान और अतीत सभी के बारे में विस्तार से कह सुनाउंगी.

“ठीक है...मैं कल ग्यारह बजे के आसपास आ रहा हूँ” उसने कहा और वापस अपने घर की ओर बढ़ गया.

कालबेल बजते ही दरवाजा खुल गया. शायद वह उसी का इन्तजार कर रही थी.

सारी औपचारिकताओं के बाद वह एक कुर्सी पर धंस गया. ठीक उसके सामने वह कुर्सी लगाकर बैठ गई थी. देर तक छत की ओर टकटकी लगाकर देखते रहने के बाद उसने मुंह खोला, शायद वह अपने अतीत को समेटने में लगी थी.

“ रोहितजी.....शुरु से ही मैं मेधावी छात्रा रही हूँ. ड्रेस डिजाइनिंग कोर्स के साथ ही मैंने कालेज ज्वाईन कर लिया था. एक बार कालेज में रोमियो-जुलियट नाटक खेला जाना था. प्रो. सिन्हा इस प्ले को डायरेक्ट करने वाले थे. उन्हें जुलियट के लिए उपयुक्त पात्र की तलाश थी. रोमियो का चुनाव वे पहले कर चुके थे. आडिशन में मेरा स्लेक्शन हुआ. इस तरह मैं घ्रुव के संपर्क में आयी. हमने नाटक प्ले किया. नाटक बेहद सफ़ल रहा. इस प्ले के बाद से कालेज के स्टुडेंट हमे रोमियो-जुलियट कहकर बुलाते. ध्रुव से मुलाकातें होती रहीं. उसमें एक नहीं अनेक गुण समाए हुए थे,साथ ही वह एक सुलझे हुए व्यक्तिव का धनी भी लगा मुझे. उसमें एक सफ़ल नाटककार के गुणॊं के अलावा गीत-संगीत में गहरी रुचि थी. गायकी में वह बेजोड़ था. गीत-गजल भी वह लिखा करता था और माडर्न आर्ट में तो वह पारंगत था ही. यही सब कारण थे कि मैं मन ही मन उसे चाहने लगी थी. रोमियो-जुलियट का नकली जीवन तो हम जी ही रहे थे. अब हमने फ़ैसला कर लिया था कि इसे हकीकत में बदल देंगे, लेकिन हमारे बीच ऊँच-नीच की एक अभेद्य दीवार खड़ी हो गई. इस दीवार को तोड़ने की हिम्मत तो हममें थी नहीं, सो हमने घर छोड़ देने का फ़ैसला किया. भाग कर विवाह किया और इस तरह घर-गिरस्थी की गाड़ी चल निकली.

ध्रुव ने टाप-टेन में पोस्ट-ग्रेजुएशन किया था. उसे नौकरी के लिए भटकना नहीं पड़ा और वह एक कालेज में सहायक प्राध्यापक हो गया. मुझे भी एक गार्मेन्ट फ़ैक्टरी में ड्रेस डिजाइनर के पद पर नियुक्ति मिल गई. इस बीच हमारे एक बेटा और एक बेटी पैदा हुए. इनके बारे में मैं आपको पहले ही बता चुकी हूँ.

अच्छे हंसते-खाते-पीते परिवार को न जाने किसकी नजर लग गई. एक रात घ्रुव को सिवीयर अटैक आ गया. स्कार्ट में उसका आपरेशन हुआ. इसमें करीब तीन लाख खर्च हुए. उस समय इतनी बड़ी रकम हमारे पास तो थी नहीं. जैसे-तैसे रकम का इन्तजार भी कर लिया गया. लेकिन कुछ दिन बाद वह पैरेलाइज्ड हो गया. एक मुसीबत से निकली भी नहीं थे कि दूसरी आ धमकी. जैस-तैसे उसको संभाला ही था कि वह फ़ोबिया का शिकार हो गया. उसके मन में एक फ़ांस घर कर गई कि मेरे किसी अन्य से नाजायज संबंध है. लाख समझाने के बाद भी उसे मुझ पर यकीन नहीं हुआ. नारकीय जिन्दगी बन चुकी थी मेरी. मैंने कड़ा फ़ैसला लेते हुए निर्णय कर लिया था कि उसे अब उसके हाल पर छॊड़ दिया जाना चाहिए. उसका अब जो होना है सो हो लेकिन मैं अपने बच्चों का जीवन बर्बाद करना नहीं चाहती थी. एक रात मैंने घर छोड़ दिया और बच्चों को लेकर अपने शहर चली आयी. मेरे पास मेरा अपना हुनर था. जल्दी ही मैंने पड़ौस की औरतों को सिलाई-कढ़ाई सिखलाई, उन्हें पढ़ना-लिखना सिखाया और इस तरह मेरा अभियान सफ़लता के कदम चूमने लगा. यह काम यहीं तक नहीं रुका, बल्कि गांव-देहातों तक जा पहुंचा. हजारों- हजार महिलाएं इससे लाभान्वित हुईं. स्कुल भी खोले गए. इस तरह मैंने गांव की अनपढ़-गवांर समझी

जाने वाली महिलाओं के जीवन-स्तर को ऊँचा उठाने के लिए अपना जीवन होम कर दिया. इस बात की चर्चा तो पूरे देश भर में होना था, सो हुई भी और यह खबर दिल्ली भी जा पहुंची. शायद इसी का परिणाम है कि मुझे इस देश के महामहिम के हस्ते सम्मानित होने का गौरव प्राप्त हुआ.

अपने अतीत और वर्तमान को सुनाते हुए वह फ़बक कर रो पड़ी.

रोहित ने आगे बढ़कर उसे शाबासी देनी चाही तो माधुरी उसके सीने से चिपक गई. वह जार-जार रोए जा रही थी. उसने उसकी पीठ थपथपाते हुए कहा- " अरे पगली...इसमें रोने की क्या बात है. तुम तो शेर दिल औरत हो... शेर दिल. अच्छा ही किया तुमने जो ध्रुव से समय रहते किनारा कर लिया वरना लांछन के बौछार से तुम घुट-घुटकर मर जातीं. मैं ही क्या... कोई और भी इस बात तो सुनता कि तुमने कितनी ही विरान जिदंगियों में आशा की किरण जगाई है..उन्हें नया जीवन दिया है और उनका आंचल खुशियों से भर दिया है..वरना आज की इस स्वार्थी दुनिया में भला कौन किसके लिए जीता है. तुम धन्य हो माधुरी...धन्य हो".

झरते आंसूओं से उसकी शर्ट भीगी जा रही थी. वह अब तक यह समझ नहीं पाया था कि वे पश्चाताप के आंसू थे अथवा खुशी के.

(4) अन्तिम निर्णय

मन था कि कहीं जुड़ नहीं पा रहा था. जुड़ता भी कैसे, जब उदासी, गहरी काली चादर ओढ़े मन के भीतर उतर आयी हो तो खुश कैसे रहा जा सकता है?. उसने अपनी हथेली फ़ैलाई और देखने की कोशिश करने लगी कि कहीं विधाता ने गलती से छोटी-मोटी ही सही, खुशी की एक छॊटी सी लाईन ही खींच दी हो ?. हथेली पर तेढ़ी-मेढ़ी लाइनों का जाल सा बिछा था. कहीं आपस में एक दूसरे को काटती हुईं तो कहीं एक सिरे से आकर दूसरी ओर निकल जाती हुई. निश्चित ही इन लाइनों में से कोई एक लाईन तो जरुर रही होगी खुशी कि, लेकिन दुर्भाग्य कि वह कई जगहों से कटी हुई थी. इन लाइनों के क्या अर्थ है, इनमें क्या लिखा-बदा है, यह तो वह नहीं जानती लेकिन इतना जरुर जानती है कि उसके भाग्य में खुशी की जगह दुख ही दुख लिखे हैं,

दिल पर छाई उदासी की कलिमा अब आँखों में उतर आथी थी. उदास आँखे लिए वह खिड़की से बाहर देखने लगी थी. बाहर गहमा-गहमी थी. लोग बदहवास से आते और दूर निकल जाते. कुछ बच्चे कंचे खेलने में लगे थे. जो ज्यादा कंचे जीत जाता, खुशी से उछल-कूद करने लगता और जो हार जाता मुँह लटकाए एक ओर खड़ा रहता. तभी उसे बाबा संपतराव धरणीधर की एक कविता याद हो आयी.. " **कभी खुशी, तो गम कभी, पी रहे हैं लोग, किस्त-किस्त जिन्दगी जी रहे हैं लोग ".** इन छोटे-छोटे शब्दों में जिन्दगी का गहरा फ़लसफ़ा छिपा हुआ है. सच ही है, खुशी सभी को नहीं मिलती और न ही सभी खुशनसीब होते हैं.

तभी उसकी नजरें आकाश की ओर उठ गई. उसने देखा. एक कटी हुई पतंग हिचकोले खाते हुए नीचे की ओर आ रही है. उसे देखकर वह सोचने लगी थी- “जब तक पतंग तनी हुई थी, कितनी शान से आसमान में इतरा रही थी और जैसे ही उसकी डोर कटी, वह कहीं की नहीं रही. न आसमान की और न ही उसकी जो उसे उड़ा रहा होता है. कटी हुई यह पतंग किस ओर जाकर गिरेगी, कोई नहीं जानता. संभव है किसी पेड़ की डाली से आकर उलझ जाएगी या फ़िर टेलीफ़ोन के तार पर जाकर लटक जाएगी. धोके से किसी लूटने वाले के हाथ लग गई तो पलभर में उसका अस्तित्व ही मिट जाएगा, क्योंकि पंतग लूटने वाला एक नहीं बल्कि दस-पांच लड़के इस लूट में शामिल होते हैं. कटी हुई पतंग को देखकर वह अपनी तुलना पतंग से करने लगी थी. फ़र्क केवल इतना ही है कि वह दोनों स्थितियां झेल रही है बारी-बारी से, कभी अधर में टंगे रहने के लिए तो कभी बंधनहीन तैरने के लिए.

विचारों की कंटीली झाड़ियों में उलझते हुए उसका मन लहुलुहान हुआ जा रहा था. वह और कुछ सोच पाती तभी उसकी बेटी कुनमुनाते हुए रोने लगी. शायद उसने सु कर दिया था. गीले कपड़ों में वह अपने आपको असहज पा रही थी. उसने हथेली से बिछे कपड़ों को छू कर देखा. अनुमान सही निकला. बिना देर किए उसने कपड़ा बदल दिया और हथेली से थपकी देने लगी. थोड़ी देर तक तो वह कुनमुनाती रही फ़िर सो गई थी.

पास ही एक पीपल का पेड़ था जिस पर पखेरुओं ने घोंसले बना रखे थे. पीपल की शाखों में उलझा सूरज धीरे-धीरे नीचे उतरते हुए अस्ताचल की ओर बढ़ने लगा था और एक सुरमई अंधियारा छाने लगा था. पक्षियों के दल अब लौटने लगे थे. वे अपने नन्हें शिशुओं के लिए मुंह में चुग्गा-दाना भर कर लाए थे. घोंसलों में बैठे नन्हें परिंदें घोंसले के बाहर अपना सिर निकाले उन्हें आता देख, खुश होकर चिंचियाने लगे थे. पक्षियों का दल अपने-अपने घोंसले पर आकर उतर गए थे और अब वे अपने-अपने शिशुओं के मुंह में चुग्गा खिलाने लगे थे. शिशुओं से देर तक लाड़ लड़ाने के बाद, वे दूर-दूर तक उड़कर जाते और फ़िर लौट आते थे. शायद दिन भर के बिछड़े अपने संगी-साथियों के साथ आकाश में उड़ते हुए एक दूसरे का हालचाल जानने की गरज से ये उड़ाने होती थीं. सूरज अपनी किरणों का जाल समेटे पहाड़ के उस पास उतरने की तैयारी में था. तभी सारे पखेरु अपनी-अपनी बोलियों में बोलने लगे थे, शायद अपने आराध्य देव की बिदाई में वे मिल जुलकर सांध्यगीत गा रहे थे. ये सब दृष्य देखकर बूढ़े पीपल की देह में झुरझुरी सी भर आयी थी. वह भी अब तालियाँ बजा-बजाकर पक्षियों का उत्साहवर्धन करने लगा था.

काला-कलूटा अन्धियारा खिड़की फ़लांग कर अन्दर घुस आया और पूरे कमरे में फ़ैल गया. देर तक अंधियारे में बैठे रहने के बाद उसने स्विच आन किया. रोशनी से कमरा जगमगा उठा. सबसे पहले उसकी नजर बेटी पर पड़ी. उसके सूखे होंठों पर तैरती मुस्कान देखते ही उसका मन वितृष्णा से भर आया. उसने तत्काल अपनी नजरें हठा ली. मन में तरह-तरह के विचार उठ खड़े होने लगे थे. वह सोचने लगी थी-“ इस कलमुहीं को मेरी ही कोख से पैदा होना था ?. पैदा ही हुई थी तो शकल-सूरत में तो खूबसूरत होनी चाहिए थी. सूखे गन्ने जैसे तो उसके हाथ-पांव है. चमढ़ी का रंग भी ऎसा कि कोयला भी शरमा जाए. जचकी के ठीक बाद नावन ने उसे नल्हा-धुलाकर पास में लिटाया तो देखते ही वह बिफ़र पड़ी थी और कह उठी थी कि इतनी

बदसूरत लड़की मेरी नहीं हो सकती.?. कहीं तुम इसे कब्रस्थान से तो उठाकर तो नहीं ले आयी? मैं ही क्या कोई भी इसे कोई देख ले, तो यही कहेगा कि इसे कब्र से ही उठाकर लाया गया है. पास बैठी भाभी ने लगभग डांटते हुए तथा इस बात का खण्डन करते हुए बतलाया कि तूने ही तो इसे जन्मा है. कोई क्यों भला तेरे साथ ऎसा करेगा. पता नहीं... इस करमजलि को हमारे ही घर पैदा होने था. इसके केवल हाड़ ही हाड़ है, मांस तो एक तोला भी नहीं है. शक्ल-सूरत में भी उतनी खूबसूरत नहीं है. बच्चे पैदा होते ही रोने लगते है, जबकि ये तो हंसी थी डायन के जैसी. मुँह में दांत भी इसके देखे गए हैं. अपशकुनी पैदा हुई है ये लड़की. अपने परिवार में तो क्या, दूर-दूर तक ऎसी लड़की पैदा हुई हो, हमने तो नहीं सुना. बड़बड़ाते हुए वे कमरे से बाहर निकल गईं थीं.

भैया भी खुश कहां थे? जिस दिन ये पैदा हुई, उसी दिन उन्होंने चेतावनी देते हुए कहा था-" सुसी.....जिन्दगी भर चैन से जी नहीं पायेगी इस लड़की को लेकर. जितनी जल्दी हो सके, इससे छुटकारा पा ले". और क्या कहते वे ?. कम बोलकर भी उन्होंने काफ़ी कुछ कह दिया था. इसके बाद उन्होंने कमरे में झांक कर भी नहीं देखा था.

जिस दिन से ये पैदा हुई है, उस दिन से घर का सुख-चैन ही छिन गया था. खुश होने के बजाय सभी दुखी थे. भैया-भामी से लेकर भतिजा-भतिजी भी इसके आने से खुश नहीं हुए थे. भाई ने इसके पैदा होने के बाद सुशील को फ़ोन करके खबर दी थी कि उसके बेटी पैदा हुई है. उत्सुकतावश उसने पूछा भी थी कि कैसी दिखती है उसकी लाड़ो? उसका रंग-रुप कैसा है? मेरी शक्ल पर है कि उसकी आई की शकल पर गई है. भैया क्या कहते? कहने और छुपाने को था ही क्या? वे झूठ कैसे बोल सकते थे? बोलना भी नहीं चाहिए था? अगर बात छुपा भी जाते और जब हकीकत सामने आती तो चेहरा दिखाने लायक नहीं रहता उनका ? जो हकीकत थी उन्होंने सच-सच कह सुनाया था सुनील को. सुनते ही उसका मूड खराब हो गया था. दोनों के बीच जो बातें हुईं उसे सुनकर तो उसका कलेजा धक से रह गया था. सुशील ने तो सीधे-सीधे कह दिया था कि उसे ऎसी लड़की नहीं चाहिए. संभव हो तो तत्काल उसका टेंटुआ दबा देना चाहिए. इस लड़की का जिंदा रहना हमारे लिए नासुर बन जायेगा. सही कहा था सुनील ने. उसकी जगह कोई और होता तो वह भी यही कहता.

सुधा का मन किसी घड़ी के पेण्डुलम की तरह दोलायमान हो रहा था. कभी इधर, तो कभी उधर. वह निर्णय नहीं कर पा रही थी कि आखिर उसे क्या करना चाहिए? एक मन होता कि इसका टेंटुआ तत्काल दबा देना चाहिए और इससे छुटकारा पा लेना चाहिए. एक मन होता कि क्या एक माँ को ऎसा करना चाहिए? क्या एक माँ ऎसा कर पाएगी?. तरह-तरह के विचार मन में आते जो उसे अशांत कर जाते.

नींद ने आंखों से दूरी बना रखी थी. कभी पास आती तो कभी कोसों दूर निकल जाती. बिस्तर पर सोती लड़की को देखती तो उसे लगता कि कोई नागिन पसरी पड़ी है. न तो उसे हाथ लगाने की इच्छा होती और न ही लाड़ लड़ाने की इच्छा ही होती. नींद को पास बुलाने का एक ही नायाब और पुराना तरीका था उसके पास. स्कूल की पढ़ाई के समय जब उसे नींद नहीं आती थी तो वह कोई किताब निकाल कर बैठ जाती थी. पढ़ते-

पढ़ते आँखें बोझिल होने लगती थी और वह कब नींद के आगोश में चली जाया करती थी, पता ही नहीं चल पाता था. कमरे में उस समय कोई किताब उपलब्ध नहीं थी. किताबों का जखिरा तो भाई के कमरे में होता है. उनकी अपनी नीजि लायब्रेरी है. लेकिन इतनी रात गए उनके कमरे में जाना उचित नहीं लगा था उसे. भाई भले ही नहीं जाग पाए लेकिन भाभी इनसे हटकर है. हलका सा खटका सुनते ही वे उठ बैठती हैं. यदि उनकी नींद खुल गई तो सैकड़ों सवाल दागे जायेंगे और वह यह नहीं चाहती कि उसके लिए किसी की नींद में खलल पैदा हो. बिना लाईट जलाये उसने टेबुल को टटोला, अखबारों का पुलिंदा पड़ा हुआ था. बिना किसी आहट के उसने अखबारों का गठ्ठा उठाया और अपने कमरे में चली आयी.

शायद ही कोई ऎसा अखबार होगा जिसमें महिलाओं के साथ सामुहिक बलात्कार और बलात्कार के बाद जघन्य हत्या की खबरें न छपी हों. चार साल की मासूम बच्ची से लेकर जवान और बूढ़ी महिलाओं तक को नहीं बख्शा था इन आतताइयों ने. कभी सूने घर में घुसकर, तो कभी शादी का प्रलोभन देकर उनकी असमत लूटी गई, तो कभी चलती बस में तो कभी कार में उनके शरीर को रौंदा गया या उसे रास्ता चलते अगवा कर लिया गया. और सुनसान जगह पर ले जाकर उसका शारीरिक शोषण किया, फ़िर हत्या कर दी गई ताकि नाम उजागर न हो सके और उसे विवस्त्र कर सड़क पर फ़ेंक दिया गया. गुंडों का खौफ़ इतना बढ़ गया है कि लोग अवाक होकर देखते रहते हैं लेकिन बीच बचाव करने कोई आगे नहीं आता. कुछ दयालु किस्म के लोग मदद के नाम पर आगे बढ़ते तो जरुर हैं लेकिन जान से मारे जाते हैं. इस डर के लोग हिम्मत नही जुटा पाते और दरिन्दे अपने मकसद में कामयाब हो जाते हैं. एक खबर ने तो उसे बुरी तरह से चौका दिया था. एक अर्धविक्षिप्त महिला को वे रोटी खिलाने के नाम से एक सूने नवनिर्मित मकान में ले गए थे और उसके साथ बलात्कार किया और उसे मौत की नींद सुला दिया गया था.

हत्या और बलात्कार के किस्से पढ़-पढ़कर उसका माथा ठनकने लगा था और वह इस सोच में पड़ गई थी कि अगर यह लड़की किसी तरह जिंदा भी बची रही तो उन पर बोझ बन कर ही रहेगी. पहली बात तो यह कि वह न तो तन से स्वस्थ है और न ही मानसिक रुप से विकसित. यदि उसे जिंदा रखने का प्रयास भी किया जाए तो पास में इतनी रकम भी नहीं है कि उस पर खर्च किया जा सके. एक अपंग, लाचार लड़की को पालना, उसका हगा-मुता करना, उसकी देखरेख करना, उसे हाथों से उठाना, नहलाना-धुलाना, सजाना-संवारना आसान काम थोड़े ही है? बावजूद इसके वह बच भी रही तो कौन भला उससे शादी करना चाहेगा और कौन भला इस बला को गले लगाना चाहेगा? मां-बाप भले ही ममता के नाम पर उसे जिलाते रहें लेकिन उनके न रहने पर कौन उसकी देखरेख करेगा...कौन उसकी परवरिश करेगा?

तरह-तरह के विचार मन में उठ खड़े होते, जिनका समाधान कर पाना उसके बूते के बाहर था. काफ़ी सोचने-समझने के बाद उसने अन्तिम निर्णय ले लिया था कि यदि एक मां किसी बच्चे को जन्म देती है तो उसे मार भी सकती है, यदि वह खुद के लिए, समाज के लिए, देश के लिए अनुपयोगी सिद्ध होता है तो, उसे तत्काल समाप्त कर देना ही उचित होगा.

(5)

आखिर वह कौन था?

" कैसी है अब जानकी....क्या हुआ था उसे....अभी दो दिन पहले तक तो ठीक थी...अचानक ऐसे क्या हो गया.....किस वार्ड में भरती है.....इतना सब कुछ हो गया और आपने हमें फ़ोन करके बतलाना तक उचित नहीं समझा...क्या हम इतने पराए हो गए हैं? अगर उसे कुछ हो जाता तो हम तुम्हें जिन्दगी भर माफ़ नहीं करते."

वे क्रुद्ध सिंहनी की तरह दहाड़ रही थीं. दहाड़ सुनकर उनकी घिग्गी-सी बंध गई थी. कुछ प्रश्न तो ऐसे भी थे, जिन्हें सुनकर, वे अन्दर ही अन्दर तिलमिला भी उठे थे. इस दुर्घटना के ठीक बाद उन्होंने टेलीफ़ोन लगाया भी था,लेकिन किसी ने उठाया नहीं. इसके बावजूद भी वे कह रही हैं कि हमें फ़ोन लगाकर सूचना तक नहीं दी? बार-बार फ़ोन लगाने का समय ही कहाँ बचा था उनके पास?. यह वह समय था, जब जानकी को तत्काल अस्पताल ले जाना जरुरी था.

प्रत्युत्तर में वे बहुत कह सकते थे,. शब्दों का अक्षय भंडार था उनके पास. फ़िर शब्दों की अर्थवत्ता को नए-नए आयाम देने वाले सिद्धहस्त प्राचार्य के लिए, यह कोई दुष्कर कार्य नहीं था, वे जानते थे कि सामने खड़ा शख्स कोई और नहीं बल्कि उनकी भाभीजी थी. वे सदा से ही उन्हें सम्मान देते आए हैं. मुँह लगकर कैसे बात कर सकते थे?. फ़िर उन्हें यह अधिकार भी बनता है. वे हर हाल में उनका सम्मान बचाए रखना चाहते थे. मर्यादा की भी अपनी एक सीमा होती है और वे किसी भी सूरत में मर्यादा की सीमा लांघना नहीं चाहते थे. अतः चुप रहना ही श्रेयस्कर लगा था उन्हें.

बोलते समय उनका चेहरा तमतमाया हुआ था. शब्दों में तलखी थी. वे कुछ ज्यादा ही तेज सुर में बोल भी रही थीं.

सारा गुस्सा एक साथ में उगल देने के बाद वे एकदम शांत हो गई थीं. तेज बोलने के कारण अथवा सीढ़ियाँ चढ़कर आने के कारण वे हाँफ़ भी रही थीं.

वे सिर झुकाए भाभीजी के क्रोध का सामना करते रहे थे. सब कुछ सुन चुकने के बाद, उन्होंने अपने सूख चुके हलक को, थूक से गिला करते हुए कुछ कहना चाहा लेकिन इसके पहले ही जयश्री अपनी मम्मी पर भड़क उठी.

"मम्मीजी...आप भी कैसे-कैसे ऊल-जुलूल बातों को लेकर बैठ गईं...... देखतीं नहीं आप...... अंकल जी इस समय कितनी भीषण मानसिक-यंत्रणाओं के दौर से गुजर रहे हैं. क्या अभी और इसी समय इतना सब कुछ पूछना जरुरी है? पत्नि कोमा में पड़ी हैं. बेटा विदेश में है. ऐसे कठिन समय में इन्हें सवालों की नहीं, बल्कि सहानुभूति में पगे शब्दों के मलहम की जरुरत है. ऐसे शब्द...जो इनका ढाढस बंधा सके."

बरामदे में लटके बल्बों से झरती पीली-बीमा रोशनी को चीरते हुए, उनकी नजर बेंचें पर बैठे मरीजों के अभिभावकों पर जा टिकी. सभी के म्लान चेहरे, पीले पके आम की तरह लटकी सूरतें और चेहरों पर चिंता की मकड़ियों के घने जालों को देखकर, वे सिहर उठे थे. फ़िर पीली मिट्टी से पुती दीवारें भी, उनके भय में वृद्धि करने लगी थी.

उनकी नजरों के सामने रह-रहकर उस नवयुवक का धुंधला सा चेहरा डोलने लगता, जिसे वे पहिचान नहीं पा रहे थे. हिंसक हो चुकी भीड़ को चीरता हुआ वह उनके पास आया था और विनयपूर्वक कहने लगा था- "अंकलजी ...आपकी एबुलेंस शायद ही आगे बढ़ पाएगी. सायरन बजता रहेगा लेकिन उसे सुनने वाला कौन है? देखते नहीं भीड़ का उन्माद?. संभव है, कहीं वे इसे भी आग के हवाले कर दे. अब तक कई गाड़ियाँ फ़ूँकी जा चुकी है....अगर इसी तरह आप खड़े रहे तो अंटी को खो बैठेंगे. देख रहे हैं आप.... किस कदर मारकाट मची है, पत्थर पर पत्थर बरसाए जा रहे हैं. जगह-जगह टायर जला कर रोड में अवरोध बिछाये जा रहे हैं. आप मुझे नहीं जानते लेकिन मैं आपको भली-भांति जानता हूँ. मैं कभी आपका विद्यार्थी रहा हूँ. आप निश्चिंत रहें, मैं किसी तरह बचते-बचाते इन्हें अपने कंधे पर डालकर अस्पताल ले जाता हूँ. आप भी किसी तरह वहाँ पहुँचने की कोशिश कीजिए. कृपया सोच-विचार में देर मत लगाइए...जरा सी भी देरी की तो इनकी जान जा सकती है. क्या आप मुझ पर भरोसा करेंगे?

"क्या आप मुझ पर भरोसा करेंगे"......शब्द अन्दर गहरे तक उतर कर कोहराम मचाने लगे थे. उन्होंने उस नवयुवक के एक-एक शब्द को ध्यान से सुना था. वे सोचने लगे थे-... एक अजनवी देवदूत बनकर उनके सामने खड़ा प्रार्थना कर रहा है कि वह इस संकट की घड़ी में उनके काम आ सकता है. सच ही कह रहा है वह...अगर जरा सी भी देरी, मैने अपनी ओर से की, तो निश्चित ही मैं जानकी को खो बैठुंगा. अगर ऐसा कुछ हुआ तो वे जिन्दगी भर अपने को कभी माफ़ नहीं कर पाएंगे. उन्होंने उस नवयुवक को तत्काल ही ऐसा करने की अनुमति दे दी थी..

पलक झपकते ही उस नवयुवक ने अचेत पड़ी जानकी को अपने कंधे पर डाला और भीड़ को चीरता हुआ द्रुतगति से अस्पताल की ओर बढ़ चला था. वे भी यंत्रवत उसके पीछे हो लिए थे.

वे कुछ ही कदम साथ चल पाए थे कि भीड़ ने उन्हें पीछे ठेल दिया था. वे गिरते-गिरते भी बचे थे. किसी तरह उन्होंने अपने को गिरने से बचाया और बचते-बचाते अस्पताल की ओर बढ़ने लगे थे.

अस्पताल पहुँचकर उन्होंने रिसेप्शन काउण्टर पर अपना परिचय दिया. मुश्किल हालातों का हवाला देते हुए सारा किस्सा कह सुनाया और जानना चाहा कि उनकी पत्नि को किस वार्ड में भरती किया गया है?. उन्हें यह जानकर प्रसन्नता हुई कि युवक के जानकी को अस्पताल में भरती करवा दिया है और इस समय वह आई.सी.यू. वार्ड में भर्ती है. एक आशा की किरण उन्हें दिखाई देनी लगी थी कि देर-सबेर ही सही, वह स्वस्थ हो ही जाएगी.

उनकी नजरें अब उस नवयुवक को खोजने लगी थी. वे उसे धन्यवाद के साथ ही कुछ ईनाम भी देना चाहते थे. चारों ओर नजरें घुमाकर उन्होंने देखा भी. लेकिन वह कहीं नजर नहीं आया. उत्सुकतावश उन्होंने काउण्टर बैठे व्यक्ति से जानकारी लेनी चाही, तो उसने इन्कार की मुद्रा में अपना सिर हिला दिया था. उन्हें अपने आप पर आत्मग्लानि-सी होने लगी थी कि उसी वक्त वह उसका नाम-पता आदि जान सकते थे, जब वह मदद देने के लिए आगे आया था. लेकिन अब कुछ नहीं किया जा सकता.

बेंच पर बैठे हुए उन्हें कोफ़्त होने लगी थी. कभी वे अपनी जगह से उठ खड़े होते. बरामदें का चक्कर लगाते फ़िर थक-हार कर पुनः बैठ जाते. फ़िर वे आहिस्ता से उठते और खिड़की के पास जाकर सटकर खड़े हो जाते. खिड़की में जड़े, जगह-जगह खरोचें गए कांच में से, वे भीतर झांकने का प्रयास करते. अन्दर कुछ भी दिखाई नहीं देता. वे वहाँ से हट जाते. फ़िर बेंच पर आकर बैठ जाते और मन ही मन अपने ईष्ट देव का सुमिरन करने लगते

वे खुली आँखों से हिंसक भीड़ का नजारा देख चुके थे देख चुके थे कि किस तरह दूकानों-मकानों और वाहनों को आग के हवाले किया जा रहा था. सड़क पर जगह-जगह टायर जलाए जा रहे थे. लोग गला फ़ाड़-फ़ाड़ कर चिल्ला रहे थे...ले के रहेंगे आजादी...हक से लेंगे आजादी......लड़कर लेंगे आजादी. कभी कोई रामधारीसिंह दिनकर की कविता की पंक्तियों को दोहराता हुआ कहता...सिंहासन खाली करो कि जनता आती है...... एक चिल्लाता.....अभी तो ये अंगड़ाई है.......फ़िर भीड़ में से आवाजें आती......आगे और लड़ाई है. कभी कोई चिल्ला उठता...साले सब चोर हैं..इस्तीफ़ा दो...अपने नेता के स्वर में स्वर मिलाते हुए पूरी टीम, शब्दों को ऊँचें स्वर में दुहराने लगती. इस तरह वे अपनी कर्कश आवाजें निकालते हुए, पूरे आकाश को विदीर्ण किये जा रहे थे. वे समझ नहीं पा रहे थे कि इन युवाओं को कौन सी आजादी चाहिए? और किस बात की आजादी चाहिए?. आखिर ये कैसा लोकतंत्र है, जहाँ जान-माल की कोई कीमत नहीं? आखिर वे कौन हैं देशद्रोही, जो इस देश में अराजकता फ़ैला कर अपने मंसूबों को सफ़ल होते देखना चाहते है? अपने ही शहर को जलाकर आखिर इन्हें मिलता क्या है? क्या कभी इनकी सोच में, ये बात नहीं आती कि इस दंगाई में कितने ही निर्दोष लोग अपनी जान से हाथ धो बैठते है?

मन के आँगन मे धधक रहे इन ज्वलंत प्रश्नों के ज्वालामुखी ने उन्हें अशांत कर दिया था. तभी उन्होंने वार्ड के दरवाजे को खुलता देखा. एक नर्स अपनी सैंडिले खटखटाते हुए बाहर निकली. यंत्रवत वे उठ खड़े हुए और उसे रोकते हुए उन्होंने जानकी के बारे में जानना चाहा. उसने टका सा जवाब देते हुए कहा- “देखिए मिस्टर...न तो आप लोग चैन से बइठता है और न ही हमको अपना काम करने देता है. हम अपनी ओर से पूरी कोशिश कर रहा है, आगे क्या होगा, यह गाड (GOD) जानता है. हम नहीं” कहते हुए वह दूसरे कमरे में समा गई थी.

नर्स का रूखा सा जवाब पाकर वे अन्दर तक हिल-से गए थे. जबान सूखने लगी थी और दिल घबराने लगा था. वे सोचने लगे थे-"सच ही तो कह रही थी. किसी को जिलाना और किसी के प्राण हर लेना, इनके हाथ में नहीं है. वे तो अपनी ओर से केवल कोशिश ही कर सकते हैं.

भारी कदमों से चलते हुए वे पुनः बेंच पर आकर बैठ गए थे और मन ही मन जानकी के जल्दी स्वस्थ होने की कामना करते हुए ईश्वर से प्रार्थना करने लगे थे.

देर तक प्रार्थना में लीन रहने के बाद वे अपने अतीत की भूल-भुलैया में प्रवेश करने लगे थे. बात चार-साढ़े चार बजे की थी, तभी फ़ोन की घंटी घनघना उठी. फ़ोन अजय का था. उसने बतलाया कि वह घर आ रहा है. उसने यह भी बतलाया कि अब की बार वह पूरे पन्द्रह दिन हम लोगों के साथ ही रहेगा. खबर ही कुछ ऐसी थी जिसे सुनकर जानकी बेहद खुश हुई थी. ममता की कुम्हलाई लतिका हरियल होने लगी थीं. पोर-पोर में आनन्द की लहरियाँ हिलोरे लेने लगी थीं. मन-मयूर थिरकने लगा था. पैर तो उसके जमीन पर ही नहीं पड़ रहे थे. वह फ़िरकी की तरह घूम-घूमकर नाचती भी जा रही थी. बेटे के आगमन की खबर पाकर कौन माँ भला खुश नहीं होगी?.

अपने बेटे की आगमन की खुशी को यादगार बनाने के लिए उन्होंने भी कुछ योजनाएँ बना डाली थीं. वे चाहते थे कि अति विशिष्ट स्वजनों, अतिथियो और रिश्तेदारों की उपस्थिति में अजय और जयश्री की मंगनी की भी घोषणा कर देंगे. गोविन्द उनका दोस्त ही नहीं बल्कि एक सच्चा हमदम भी है. उन्हें पक्का यकीन है कि वह इस रिश्ते से इनकार नहीं करेगा. उनकी दिली इच्छा थी कि दोस्ती अब रिश्तेदारी में बदल दी जानी चाहिए. अतिगोपनीयता बरतते हुए उन्होंने पूजा ज्वेलर्स के यहाँ वेडिंग-रिंग भी बनवा कर रख ली थी.

कल्पनाओं के रंग-बिरंगे बादल झमझमाकर बरस रहे थे और वे उसमें भींग भी रहे थे. प्रसन्नता से लकदक होता जानकी का चेहरा और फ़ुलझड़ी से झरते हास्य को देखकर उनकी प्रसन्नता द्विगुणित हो उठी थी. तभी टेलीफ़ोन की घंटी घनघना उठी. जानकी ने अति उत्साहित होते हुए रिसीवर उठाया. दूसरी तरफ़ अजय था.

पता नहीं, अचानक क्या हुआ?. उसका दिपदिपाता चेहरा बुझने लगा था. वह कांति-हीन होने लगी थी. मुक्त-हास्य की जगह तनाव घिरने लगा था. उसकी मुठ्ठियाँ कसने लगी थीं. वे कुछ समझ पाएं, इसके पूर्व ही वह गीली मिट्टी की दीवार की तरह भरभरा कर गिर पड़ी थी.

" हे भगवान! ये क्या हो गया" कहते हुए उठ खड़े हुए. पास आकर देखा. नब्ज टटोली. कुछ भी समझ में नहीं आया. वे बुरी तरह से घबरा गए थे. सोचने-समझने की बुद्धि को जैसे काठ मार गया था. धड़कने बढ़ गई थी.

ठीक उसी समय एक एम्बुलेंस उधर से गुजर रही थी. ड्रायवर शायद किसी मरीज को अस्पताल पहुँचा कर खाली वापिस लौट रहा था. उन्होंने एम्बुलेंस को रुकने का ईशारा किया. ड्रायवर से विनती की कि वह मरीज को अस्पताल तक पहुँचाने में हमारी मदद करे. वह मान गया. उन्होंने शीघ्रता से जानकी को उसमें लिटाया

और अस्पताल की ओर बढ़ चले थे. वे जब घर से निकले थे, तब शहर में नीरव शांति पसरी हुई थी. जैसे ही एम्बुलेंस अस्पताल के करीब पहुँची ही थी कि उनका सामना क्रुद्ध भीड़ से हुआ, जो सरकार के खिलाफ़ नारे लगाती, दूकानों में तोड़-फ़ोड़ करती, बसों, कारों और गाड़ियों के काँच तोड़ती-फ़ोड़ती, जगह-जगह टायरों को जलाकर विरोध प्रदर्शन कर नारे लगाती हुई आगे बढ़ रही थी

उस क्रुद्ध भीड़ का कुरुप चेहरा आँखों के सामने नृत्य करने लगा था. विचारों के अश्व थम से गए थे. वे हड़बड़ा कर अपनी सीट से उठ खड़े हो गए थे. काफ़ी देर बाद, वे सामान्य हो पाए थे.

तभी उन्होने देखा. आई.सी.यू का दरवाजा खुला. एक नर्स बाहर निकली. उन्होने लपक कर जानकी के बारे में जानना चाहा. वे कुछ बोल पाते कि नर्स ने अपनी ओर से उन्हें खुशखबर देते हुए कहा- “जानकी जी को होश आ गया है. वे अब एकदम ठीक हैं. दो-तीन घंटे बाद हम उन्हें जनरल वार्ड में शिफ़्ट करेंगे, तब आप उनसे मिल सकते है”.

खबर सुनते ही वे खुशी में झूम उठे थे. उन्होंने हाथ जोड़कर ईश्वर को लाख-लाख धन्यवाद दिया.

तीन दिन अस्पताल में रहकर जानकी स्वस्थ होकर घर लौट आयी थी. अजय भी उसी दिन शाम को घर आ गया था.

वे चाहते थे कि जितनी जल्दी हो सके अजय और जयश्री की मंगनी कर देनी चाहिए. शुभ मुहूर्त निकलवाते हुए उन्होंने सभी मित्रों और रिश्तेदारों को निंमत्रण पत्र भिजवाये और शहर के सभी अखबारों में, उस गुमनाम युवक के बारे में जानकारी देते हुए प्रार्थना की थी कि वह भी इस कार्यक्रम में जरुर आए.

शामियाने को किसी दुलहन की तरह सजाया गया था. जगह-जगह लगे फ़ानूस रंग-बिरंगी रोशनी में जगमगा रहे थे. स्व-चालित फ़वारों से लाल-पीली-नीली-नारंगी रोशनी फ़ेंकते हुए माहौल में शीतलता बिखेर रहे थे. स्टेज पर अजय और जयश्री, किसी बेशकीमती हीरों की तरह जगमगा रहे थे. जानकी के तो जैसे पर ही ऊग आए थे. वह फ़िरकी बनी, सबका दिल खोलकर स्वागत करने में जुटी हुई थी.

मेहमानों, रिश्तेदारों और स्वजनों से ठसाठस भरी भीड़ के बीच वे नमुदार हुए. उन्होंने माईक संभाला. अजय और जयश्री की सगाई की विधिवत घोषणा की. पूरा पण्डाल तालियों गड़गड़ाहट से गूंज उठा था. लोग आगे बढ़कर उन्हें बधाइयां और शुभकामनाएं देने लगे थे.

वे हंस-हंस कर अपने स्वजनों की बधाइयां स्वीकार करते हुए सभी से मिल-जुल रहे थे. लेकिन उनकी नजरें बार-बार गेट पर जाकर ठहर जाती. उनका दिल कह रहा था कि वह युवक आएगा...जरुर आएगा. उसे न आता हुआ देख, मन निराशा के गहरे भंवर में डूबने लगा था. वे अपने धड़कते हुए दिल को बार-बार समझाते...देर से ही सही, लेकिन वह आएगा...जरुर आएगा...आशा का बुझता दीप, फ़िर टिमटिमाने लगता.

सारे मेहमान एक-एक करके जाने लगे थे. थोड़ी देर में पण्डाल लगभग पूरा खाली हो चुका था. वे अब भी पूरी तरह आशान्वित थे कि वह युवक आएगा...जरुर आएगा. इसी विश्वास की लाठी का सहारा लिए, वे गेट तक चल कर आए थे. उन्होंने चारों ओर नजरें घुमाकर देखा...बाहर सन्नाटा पसरा पड़ा था. वे खिन्न मन से, निराशा का लबादा ओढ़े लौटने लगे थे. मन के किसी कोने में एक प्रश्न उनुत्तरित रह गया था कि "वह नवयुवक कौन था"?

---

(6)

घर वापसी.

lqcg ls gh mldh ckWa;h vkWa[k Qjd jgh FkhA tc tc Hkh mldh ckWa;h vkWa[k Qjdh gS] rc&rc mls 'kqHk lekpkj lquus dks feys gSaA rHkh mls Mkfd;k vkrk fn[kkA mlus lgt :i ls vankt yxk;k fd vkt og mlds csVs dh fpV~Bh t:j ysdj vk;sxkA og izlUurk ls Hkjus yxk FkkA iksj&iksj ls jksekap gks vk;k FkkA mldk e`xh&eu dqykpsa Hkjus yxk FkkA cq>k psgjk fQj fnifnikus yxk FkkA lw[kh nsg fQj gfj;y gksus yxh FkhA blh fnu dk mls cslczh ls bartkj FkkA

foxr pkj ekg ls fnus'k dk i= ugha vk;k Fkk] mlh dkj.k og ixyk;k lk jgus yxk FkkA [kkus&ihus esa mls v:fp gksus yxh FkhA jkr dh uhan o fnu dk pSu fNu x;k FkkA ,dkar {k.kksa esa mViVkax fopkj vkrs] tks fny vkSj fnekx dks eFk tkrsA og ges'kk cspSuh ls Hkjk jgrk FkkA

,d fnu rks og Mkd?kj Hkh tk igqWapk Fkk vkSj viuh fpfV~B;ksa ds ckjs esa iwNrkN djrk jgk FkkA Mkfd;s us tc badkj dh eqnzk esa viuh Hkkjh&Hkjde xnZu fgyk fn;k Fkk] rks og Hkh vanj rd fgy x;k FkkA mldk 'kjhj ihiy ds iRrs dh rjg dkai x;k FkkA rjg&rjg ds iz'u mlds fny esa lkycksjj dh rjg Nsn djrs jgs FksA vxjcRrh dh rjg og fnu&jkr lqyxrk jgk FkkA

,slk Hkh fopkj eu esa vk;k fd og [kqn 'kgj pyk tk;s vkSj viuh vkWa[kksa ls lHkh dks ns[k vk,A pkgdj Hkh og oSlk ugha dj ik;k FkkA ,d rks cq<+krh nsg] mij ls detksj vkWa[kksa dh otg ls og fgEer gh ugha tqVk ik;k FkkA

gkWa! ,d ckj og 'kgj x;k FkkA fpaVw dk tUe&fnu FkkA la;ksx ls fnus'k Hkh lkFk FkkA gok ls ckrsa djrh eksVj esa cSB dj mls yxk fd og gok esa mMk tk jgk gSA cl ls mrjrs gh mldh f?kXxh ca/k xbZ FkhA vufxur okguksa dks csyxke nkSMrk ns[k og Mj lk x;k FkkA Bxk lk jg x;k Fkk] xxupqach bekjrksa dks ns[kdjA mls rks bl ckr ij Hkh vk'p;Z gks jgk Fkk fd 'kgj dk vkneh pyrk de gS vkSj nkSMrk T;knk gSA og lkspus yxk FkkA vkneh dh 'kDy esa ?kksMs nkSM jgs gSaA HkhM ns[kdj og vlgt gks mBk FkkA mldh cqf) pdjkus yxh FkhA og vdsyk tk ik;sxk] blesa lansg gksus yxk FkkA igyh ckj esa gh fgEer tokc ns xbZ FkhA

fnus'k i= ugha fy[k ik;kA bldk dkj.k rks le> esa vkrk gS lwjt dh igyh fdj.k ds lkFk og mB cSBrk gSA nSfud fØ;k&deZ ls futkr ikdj og cxy esa fVfQu nck;s og ?kj ls fudy iMrk gSA mls jkLrs esa cl Hkh cnyuh iMrh gSA vxj igyh cl ugha idMh tk ldh] rks nQ~rj le; ij igqWap ikuk laHko ughaA mldk dk;kZy; Hkh rks mlds ?kj ls chl&iPphl fdyksehVj nwjh ij gSA vr% le; dk ikcan gksuk cgqr t:jh gS] mlds fy,A

vfr&mRlkfgr gksrs gq, fnus'k us cryk;k Fkk fd og nQ~rj ls yksu ysdj eksVj lk;fdy [kjhnus dh lksp jgk gSA lqurs gh og ced x;k FkkA mlus nks Vwd 'kCnksa essa dg fn;k Fkk fd cqjk [;ky rRdky eu ls ckgj fudky QsadsA

csyxke Hkkxrs okguksa dks og ns[k gh pqdk FkkA og ;g Hkh ns[k pqdk Fkk fd vkneh] vkneh dh rjg lMd ij py Hkh dgkWa ikrk gSA lHkh LihMesa gksrs gSaA lHkh vkxs fudy tkuk pkgrs gSaA vkxs fudy Hkkxus dh [krjukd izo`fRr ds pyrs og xQyr dk f'kdkj gks tkrk gS vkSj vle; gh ekSr dks xys yxk cSBrk gSA vius vYi izokl esa og dbZ nnZukd gknls ns[k Hkh pqdk gSA

'kgj dh u rks viuh dksbZ reht gksrh gS] u gh balku ds eu esa n;k&eerk&lgkuqHkwfr ghA gknlksa dks ns[kdj og vkxs c<+ tkrk gSA ekuks dqN gqvk gh u gksA dksbZ :duk ugha pkgrkA dksbZ iyVdj ugha ns[krkA genhZ ugha trykrkA og ugha pkgrk fd mldh viuh bdykSrh larku dHkh nq?kZVuk dk f'kdkj cusA mlus le>k fn;k Fkk fd cl ls vkus&tkus esa gh Qk;nk gSA le; cpkuk ;gkWa t:jh ugha gSA tku cpkuk vko';d gSA tku gS rks tgku gSA var esa viuk QSlyk lqjf{kr j[krs gq, mlus vkns'k fn;k Fkk fd og Hkwydj Hkh eksVj lk;fdy ugha [kjhnsxk vkSj u gh og blds fy, btktr gh nsxkA

fnus'k dh ckr rks le> esa vkrh gS fd mlds ikl ne ekjus dks Qqlr ugha gSA tc QqlZr gh ugha gS rks D;k [kkd og i= fy[k ik,xkA cgwjkuh djrh Hkh D;k gS fnuHkj!

fnus'k vkWfQl pyk tkrk gSA fpaVw vius Ldwy pyk tkrk gSA QqlZr gh QqlZr jgrh gS mlds iklA og pkgs rks ,dk/k iksLVdkMZ vius cw<s llqj ds uke fy[k ldrh gSA ij egkjkuh fy[k ik, rc uA fuiV nsgkrh&vui<&xaokj cgw fcgk ykrk rks ckr nwljh FkhA og rks 'kgj dh dkWyst i<+h yM+dh dks cgw cukdj yk;k FkkA ,slk Hkh ugha fd mls i= fy[kus dk lmj ugha gksxkA lc dqN tkurh gksxhA irk ugha--- og i= ugha fy[krhA fnuHkj Vhoh&Qhoh ls fpidh jgrh gksxhA lp gSA le; dgkWa gS] mlds iklA mls jtuh ij Øks/k gks vk;k FkkA

vrhr ds xrZ esa mrjdj og ygwyqgku gksrk jgkA og dqN vkSj lksp ikrk] Mkfd, us i=ksa ds c.My esa ls ,d i= NkWaVdj mlds gkFk esa Fkek fn;k FkkA og vius fopkjksa dh rUnzk dh [kksy esa ls iwjh rjg ls fudy Hkh ugha ik;k Fkk fd Mkfd;k tk pqdk FkkA mls viuh Hkwy dk vglkl gksus yxk FkkA

i= gkFk esa vkrs gh yxk dqcsj dk [ktkuk gkFk yx vk;k gSA mlds iwjs 'kjhj esa--- izlUurk dh ygj nkSMus yxh FkhA mlus fyQkQs dks myV&iyVdj ns[kkA i= ij fy[kh bckjrfnus'k ds gkFk gh dh FkhA og fnus'k dh fy[kkoV vPNh rjg ls igpkurk FkkA izlUurk ds lkFk mls vQlksl Hkh gksus yxk FkkA og lkspus yxk Fkk& dk'k og i<k&fy[kk gksrk rks vc rd i= i< tkrkA lekpkjksa ls voxr gks pqdk gksrkA irk ughaA fnus'k us i= esa D;k fy[k Hkstk gSA etewu tkuus ds fy, og mrkoyk gqvk tk jgk FkkA mls xksiky dh ;kn gks vk;hA mlus >V ls iSjksa esa twrs Mkys vkSj ?kj ls fudy iMkA jkLrk pyrs mls gks'k vk;k fd og c.Mh&/kksrh esa gh ?kj ls fudy iM+k gSA dqrkZ iguuk rks og Hkwy gh x;k FkkA "xkWao esa lc pyrk gS" ;g dgrs gq, O;xzrk ls vkxs c< pyk FkkA

jkLrk pyrs dbZ fopkj Hkh lkFk pyus yxsA xksiky ?kj esa feysxk Hkh vFkok ugha\ og [ksyus&dwnus u fudy x;k gks! laHko gS] og [ksr ij fudy x;k gksA [kSj! og dgha Hkh gksxk] og mls <wWa< fudkysxkA

cMk I;kjk cPpk gS xksikyA fQj iwjh V~;wfuax Hkh rks feyrh gS mllsA tgkWa Hkh feyrk gS] nknkth iz.kkke vFkok nknkth ik;ykxw dguk ugha HkwyrkA dksbZ Hkh dke crykvks] QkSju dj Mkyrk gSA i<+us dks dgksA >V rS;kj gks tkrk gSA mlds i<+us dk <ax Hkh fujkyk gSA ,sls ckaprk gS ekuks vkWa[kksa ns[kk gky lquk jgk gksA fy[kus dh dgksA QkSju nokr&dye mBk ykrk gSA fy[krk Hkh D;k xtc dk gS] ekuks dkxt ij eksrh Vkad jgk gksA

mlus nwj ls gh ns[k fy;k FkkA 'kk;n og dgha tkus dh rS;kjh esa FkkA ns[krs gh og mWaph vkokt esa cksy mBk Fkk& गोपाल .....fnus’k dk i= vk;k gSA blds vkxs og

dqN Hkh cksy ugha ik;k FkkA cksyus dks cpk Hkh D;k FkkA vc mldh pky esa xsan dh lh mNky FkhA yEcs&yEcs Mx Hkjrk gqvk og vkxs c<+ pyk FkkA

“nknkth&ik;ykxw” dgrk gqvk og mlds iSjksa rd >qd vk;k FkkA mlus mls mBkrs gq, vius lhus ls yxk fy;k FkkA mls lhus ls fpidkrs gq, mls yxk] eerk dk ,d lksrk vanj cg fudyk gSA Hkko&fog~oy gksrs gq, mlds us= lty gks mBs FksA

Xkksiky us mlds gkFk ls fyQkQk ys fy;k vkSj vksVys ij cSBrs gq, mls [kksyus yxkA og Hkh mlls lVdj cSB x;kA foLQkfjr utjksa ls og mls fyQkQk [kksyrs ns[krs jgkA viuh lkjh 'kfDr;ksa dks lesVdj og viuk /;ku ogkWa dsfUnzr djus yxk FkkA i= dh rgsa Bhd djrs gq, vc og i= i<us yxk FkkA

firkthsss---

firkth lqurs gh yxk fd fdlh us feJh ?kksydj mlds dkuksa esa mMsy fn;k gksA mldh nsg xUus dh lh ehBh gksus yxh FkhA mls ,slk Hkh yxus yxk Fkk fd fnus'k lkeus izR;{k :i ls cSBdj ckrssa dj jgk gksA

vkuaniwoZd gwWaA vkWfQl dh O;Lrrkvksa dh otg ls i= fy[kus esa dkQh foyac gqvkA i= u feyus ls vkidks fdruh ekufld ihMkvksa ds chp ls xqtjuk iMk gksxk] vkiij dSlh] D;k chrh gksxh! bl nnZ dk eq>s vglkl gSA d`i;k ekQ djus dh d`ik djsaA

firkth--- eSaus fdruh gh ckj vkils fourh dh gS fd vki ;gkWa vkdj gekjs lkFk jgsaA vkidks ysdj eSa vDlj fparkvksa ls f?kjk jgrk gwWaA vki xkWao esa fuiV vdsys jgrs gSaA vkidks dgha dqN gks x;k rks eSa lgu ugha dj ikmaxk] esjh Hkh vkf[kj dksbZ tokcnkjh gS vkids izfrA vki HkyhHkkWafr tkurs gh gSa fd nQ~rj ls ckj&ckj NqfV~V;kWa ysdj eSa xkWao ugha vk ldrkA vki vkuk ugha pkgrsA eSa ckj&ckj ugha vk ldrkA ,sls esa dSls dke pysxkA vki ds u vk ldus dk dkj.k eSa tkurk gwWaA vki [ksrh&ckMh] edku vkSj eosf'k;ksa dh otg ls ogkWa QWals jgrs gSaA eSa iwoZ esa Hkh fuosnu dj pqdk gwWa fd bu lcdks csp Mkfy,A vPNh&[kklh jde fey tk,xhA ge ;k rks ;gkWa cuk&cuk;k edku [kjhn ldrs gSa vFkok IykWV ysdj edku cuok ldrs gSaA vki&ge&lc lkFk jgsaxsA vkidks fpaVw dk Hkh lkFk fey tk;sxkA og Hkh nknkth&nknkth dh jV yxk, jgrk gS] mls vkidk lkFk fey tk;sxkA vki gh rks dgrs gSa "ewy ls lwn T;knk I;kjk gksrk gSA"

vius fdlh futh dke ls xksfoan 'kgj vk;k FkkA eq>ls mldh eqykdkr gqbZ FkhA eSaus gh igy djrs gq, mlls dgk Fkk fd dksbZ vPNk&lk xzkgd crk,A [ksr&ckMh u cspus dh og Hkh dg jgk FkkA esjh gh ftn ns[kdj og lHkh dqN [kjhnus dks rS;kj gks ik;k gSA og ;g Hkh dg jgk Fkk fd r; dher ds vykok Hkh og ikWap&iPphl T;knk nsus dks rS;kj gSA og ;g Hkh dg jgk FkkA ?kj dh pht ?kj esa gh jgsxhA

QSlyk vc vkidks djuk gSA bruk vPNk dzsrk dgkWa feysxkA vki viuh lgefr&vlgefr ds ckjs esa fy[k HkstsaA eSa le; ij vk tkmaxk rkfd jftLVªh oxSjg djk yh tk;sA

'ks"k 'kqHk

vkidk

fnus'k

,d&,d 'kCn og /;kuiwoZd lqu jgk FkkA [ksr&ckMh&?kj csp nsus dh ckr lqurs gh og ced x;k FkkA mlds psgjs ij dzks/k dh ijNkbZ;kWa Nkus yxh FkhA og ruko esa f?kjus yxk FkkA mldh vkWa[k Øks/kkfXu esa HkM+dus yxh FkhA og nkWar Hkh ihlus yxk FkkA mls ,slk Hkh yxk fd vla[; cjZ efD[k;ksa us ml ij vpkud /kkok cksy fn;k gSA iwjs 'kjhj esa na'k ds fu'kku mHkj vk, gSaA 'kCn vanj mrjdj foLQksV djus yxs FksA vanj lc {kr&fo{kr FkkA og rerekdj mB [kM+k gqvkA xksiky ds gkFk ls yxHkx i= Nhurs gq, mlus mlds VqdM+s&VqdM+s dj fn;s vkSj gok esa mNkyrs gq, ?kj dh vksj ykSV iM+kA

xksiky us laHkor% vkt igyh ckj nn~nk dks bl rjg HkM+drs ns[kk FkkA nn~nk dk jksnz:i ns[kdj og ?kcjk lk x;k FkkA ,d Mj eu dh xgjkbZ;ksa rd mrj vk;k Fkk] foLQkfjr utjksa ls og mls tkrk ns[krk jgkA

?kj vkdj og dVs gq, ykB ds yV~Bs dh rjg fcLrj ij fxj iM+k FkkA og vkos'k esa mcy jgk FkkA mldk fnekx vc Hkh fHkUuk jgk FkkA fnus'k dh fy[kh ckrsa jg&jg dj ;kn vkrhA 'kCn dysts dks Nyuh dj jgs FksA bruk gksus ds ckotwn mldh lkspus&le>us dh cqf) cjkcj dke dj jgh FkhA mls fnus'k dh cqf) ij rjl vkus yxk FkkA og lksp jgk Fkk "fnus'k vHkh cPpk gS] vdy dk dPpk gSA rHkh rks og ,Slh&oSlh ckrsa lksp ik;kA mlus

dSls vuqeku yxk fy;k fd nn~nk ,slk dqN dj ldrk gSA fuf'pr gh xksfoUn us mls HkM+dk;k gksxkA og fdlh vU; dke ls 'kgj ugha x;k Fkk cfYd og vius euksjFk ysdj fnus'k ls feyk gksxkA tc og viuk nkao nn~nk ij ugha yxk ik;k rks mlus fnus'k dks viuk eksgjk cuk;k vkSj og csodwQ mlds >kWals esa vk x;kA

xksfoUn iYys ntZs dk yaiV gS] cnek'k gS] /kwrZ gS] pkyckt gS] gjkeh gSA vk;s fnu og xkWao esa Hkh dksbZ u dksbZ c[ksM+k djrk jgrk gSA iziap jpuk mldh fQrjr gSA mldh fx) n`f"V ges'kk nwljksa dh tk;tkn ij xM+h gh jgrh gSA nkuk Mkydj rek'kk ns[kus dh mldh vknr gSA lkyk gjkeh] gjke[kksj] cnek'kA dqRrs dk fiYyk vkSj Hkh u tkus fdruh gh xkfy;kWa og cqncqnkrs gq, nsrk jgkA

xksfoUn dk uke tqcku ij vkrs gh yxk&eqWag dk Lokn dlSyk&dM+qvk gks vk;k gSA mldk th fepykus yxk FkkA vkd&Fkw djrs gq, mlus xyk lkQ fd;k vkSj [ksrksa dh vksj c<+ pyk FkkA

gjh&Hkjh] ygygkrh Qlyksa dks ns[kdj mldk psgjk dey dh HkkWafr f[kyus yxk FkkA vkWa[kksa esa BaMd Hkjus yxh FkhA 'khry gok ds >ksadksa us cnu ls fyiVrs gq, 'khryrk dh ysiu p<+ fn;k FkkA rirs cnu dks jkgr feyus yxh FkhA 'kjhj ij mHkj vk;s na'k ds fu'kku feVus yxs FksA

[ksr dh es<+ksa ls pyrs gq, og o`{k dh Vgfu;kWa dks gkFk esa ysdj fgykrk pyrk ekuks og vius fe= ls gkFk feyk jgk gksA dHkh og isM+ksa ds ruksa ij viuh gFksyh ls gYdh&lh Fkki nsrkA ekuks og mdh ihB lgyk jgk gks] ,slk djrs gq, og izlUurk ls Hkjus yxk FkkA ,slk dqN djrs gq, mlus vius firk dks ns[kk FkkA cky lqyHk ftKklk ds py mlus iwNk Fkk fd os ,slk D;ksa djrs gSa\ iz'u lqudj firk xaHkhj gks x;s FksA os vkdk'k dh vksj lj mBkdj ns[kus yxs FksA 'kk;n vkdk'k esa QSys 'kCnksa ds latky lesVus dh dksf'k'k dj jgs FksA

nsj rd ekSu jgus ds ckn os cksy ik, FksA 'kCnksa ds xgu&xaHkhj 'kCnkFkZ fNis gq, FksA 'kCn fDy"V ugha FksA lh/ks&lkns 'kCn FksA ljy vkSj vklku] ftls vklkuh ls le>k tk ldsA brus vklku fd vYiK Hkh le> ysA mUgksasus tks dqN Hkh dgk] lqudj vk'p;Z ,oa dkSrwgy gksuk LokHkkfod FkkA muds dgus dk vankt dqN&dqN nk'kZfud dh rjg FkkA de 'kCnksa esa dkQh dqN dg x, FksA mUgksaus viuh ckr tkjh j[krs gq, crykuk 'kq: fd;kA

tkurs gks eUuw---! bZ'oj us /kjrh dh mRifRr ds Bhd ckn isM+&ikS/ks yxk,A fQj vla[; tho&tUrq iSnk fd,A ckny&fctyh&ikuh os igys gh cuk pqds FksA bZ'oj tkurs Fks

fd fdruk Hkw&Hkkx NksM+k tk, fdruk ughaA mUgksaus ,d Hkkx /kjrh] rhu Hkkx ikuh Hkj fn;k rkfd fdlh tho&tUrq dks ikuh dh deh u iM+ tk,A /kjrh dk [kwc lkt&flaxkj djus ds ckn mUgksaus ekuo dh mRifRr dhA

bZ'oj tkurs Fks euq"; dh fQrjr dks vkSj mldh usd&fu;fr dks HkhA fnekx dk Hkjiwj mi;ksx djus okyk og igyk izk.kh FkkA bZ'oj ;g Hkh tkurs Fks fd ,d fnu og /kjrh esa Nsn djds ikrky rd igqWapsxkA leqnz dks phj dj og ukxyksd vkSj vkleku esa lqjk[k djds og LoxZyksd rd vk /kedsxk vkSj mls gh /krk crykus yxsxkA tgkWa ,d vksj og lkbal vkSj VsDukykWth esa ijpe ygjkdj viuh cqf) dkS'kY; ls u;h&u;h bckjrsa fy[ksxk rks ogha ,d fnu og /kjrh ds fouk'k dk dkj.k Hkh cusxkA

ftl /kjrh dks bZ'oj us Lo;a vius gkFkksa ls nqYgu dh rjg ltk;k&laokjk og Hkyk /kjrh dk fo/oa'k gksrs dSls ns[k ldrk FkkA bZ'oj dh fQj viuh Hkh etcwjh FkhA ;fn og vkneh dh mRifRr ugha djrk rks dkSu crkrk bZ'oj dSlk gSA mldk Lo:i dSlk gSA bZ'oj ds eu esa Hkh ekuo dks ysdj dqN ykylk;sa FkhaA lkjh fØ;k'khyrk ds xq.k rks mlus dsoy euq"; esa gh Mkys FksA bZ'oj dh etcwjh dgsa vFkok dqN Hkh dg ysaA mls vkneh dks /kjrh ij Hkstus dk fu.kZ; ysuk gh iM+k FkkA

tkurs gks eUuw! bUgha isM+&ikS/kksa us vknetkr dks [kkus dks ehBs&ehBs Qy [kkus dks fn, rks ogh ru <adus dks viuh [kkyA bUgha isM+ksa dh Nky ifgudj rks og lH; dgyk ik;kA viuh uaxkbZ <d ik;kA ;s ckr vyx gS fd vkneh us cnys esa bUgsa D;k fn;kA vkt og fueZerk ls muds fouk'k esa tqVk gqvk gSA lp ekuks eUuwA ;s gh vlyh /kjrh&iq= gSA ;s ,d iy ds fy, Hkh /kjrh dk lkFk ugha NksM+rsA o`{kksa dks _f"k Hkh dgk x;k gSA _f"k lnk ls gh dqN u dqN nsrs vk, gSaA Hkys gh euq"; budh fdruh gh izrkM+uk D;ksa u djsaA

eUuw----! ,d irs dh ckr vkSj lquksA vknetkr dk dksbZ Hkh mRlo gksA rht &R;kSgkj gksa] fcuk o`{k vFkok o`{kksa dh iztkfr ds mifLFkfr ds laiUu ugha gksrs] ;gkWa rd vkneh tc izk.k R;kxrk gS rks o`{k gh mldk lkFkh lkfcr gksrk gS] og Hkh mlds ru ds lkFk tyrk gqvk viuk vfLrRo feVk nsrk gSA

vknetkr tc izlUurk ls buls feyrk gS rks ;s csgn [kq'k gks tkrs gSa] os Hkh izlUurk ls ukp mBrs gSaA os bBykus yxrs gSaA dksbZ mUgsa xys yxk, vFkok Vguh idM+dj fgyk,sa lks ;s izlUu gksus yxrs gSaA gok buls feydj lkjh izlUurk nwj&nwj rd QSyk nsrh gSA iwjk okrkoj.k gh izlUurk ls Hkj mBrk gSA ;fn bUgsa Øks/k esa /kkjnkj

gfFk;kj fn[kykvks rks flgj mBrs gSaA bUgsa Hkh Hk; lrkus yxrk gSA esjs firk us dsoy bruk gh le>k;k FkkA mlesa izse dk n'kZu fNik gqvk gSA

fQj /kjrhA /kjrh rks ekWa gksrh gS] ge yksxksa dh A fcuk ekWa ds cPpksa dh dYiuk rd ugha dh tk ldrhA og viuh tehu dks ,d fu"izk.k VqdM+k ugha ekurkA ftruh mlds ikl gS og mls lEiw.kZ :i esa ekWa gh ekurk vk;k gSA og viuh ekWa dks cspus dh dSls lksp ldrk gSA ,d iq= viuh ekWa dks dSls csp ldrk gSA mls D;k vf/kdkj gS fd og ,slk dj ldsA blh /kjrh ij] blh tehu ij mldk oa'k&o`{k foLrkj ysrk vk;k gSA nl ih<+h] chl ih<+h vFkok blls dqN T;knkA og ugha tkurkA mls viuh fiNyh lkr&vkB ih<+h ds cqtqxksZa ds uke d.BLFk ;kn gSaA og dnkfi viuh tM+ksa ls ugha dVuk pkgrkA tM+ksa ls dVus dk ifj.kke D;k gks ldrk gS] og ;g Hkyh&HkkWafr tkurk gSA og fdlh Hkh dher ij viuh tM+sa NksM+dj dgha ugha tk,xk vkSj u gh tehu fdlh vkSj dks cspsxkA og xksfoUn ds fe'ku dks lQy ugha gksus nsxkA dnkfi ughaA

mlus [ksr ls vatqyh Hkj feV~Vh mBk;hA vius ekFks ls yxk;kA ,slk djrs gq, og Hkkoqd gks mBk FkkA mlds us=ksa ls vJq cgus yxs FksA viuh ekWa ds izfr meM+ vk;h izse dh lfjrk mldh lewph nsg esa gjgjkdj foLrkj ysus yxhA

euksgj dks viuh Hkwy dk vglkl gksus yxk FkkA mls ;kn vk;kA mls dHkh fnus'k dks bl jgL; ls ifjfpr ugha djok;kA fnus'k us Hkh dHkh dqN iwNk gh ughaA og jg Hkh dgkWa ik;kA Hkys gh og iwN u ik;k gksA ;g mldk drZO; curk gS fd og mls cryk,A ,d ih<+h] vkus okyh ih<+h dks crkrs pys ;g Øe cuk gh jguk pkfg,A

og fnus'k dks le>k;sxk fd og ukSdjh NksM+dj pyk vk,A D;k j[kk gS 'kgj esaA HkhM+HkkM+] ph[krs&fpYykrs] Hkkxrs&'kksjepkrs okguA 'kksj&'kjkckA ;gh rks gS 'kgj esaA ogkWa izk.knk;d ok;q dgkWa! lkWal ysuk Hkh eqf'dyA jgus dks rax&va/ksjh [kksfy;kWa] tgkWa pkj yksx Hkh u cSB ldsA [kkus&ihus dh lHkh phtsa feykoVhA ix&ix ij Msjk Mkys cSBh ekSrA tu&thou dks fuxyus ds fy, rRij cSBh gSA

lqjlk dh rjg cnu QSykrs tk jgs 'kgjksa dks lqudj og grizHk FkkA tc ls ikl okys 'kgj us viuk foLrkj ysuk 'kq: fd;k gS] rc ls mlus xkWaoksa dh [kq'kgky ftanxh dks fuxyuk 'kq: dj fn;k gSA xkWaoksa ls i<+s&fy[ks uo;qod esgur etnwj&fefL=;ksa dks 'kgj ds vkd"kZ.k us xkWao NksM+us ij etcwj dj fn;k gSA xkWaoksa esa cps jg x;s gSa os yksx tks [ksrh&ckM+h NksM+dj ugha tk ldrs] os yksx tks vikfgt gSa] ykpkj gSa] chekj gSaA os gh cps jg x;s gSa] ckdh lHkh dks 'kgj us vius esa lesV fy;k gSA

mls xkWa/khth dh ;kn gks vk;hA xkWa/khth dHkh blh xkWao esa vk;s FksA tulHkk dks lacksf/kr djrs gq, mUgksaus dHkh dgk FkkA xkWaoksa esa gh fgUnqLrku clrk gSA vr% ljdkj dks pkfg, fd og lkjh ;kstuk,sa xkWao ls gh cuuh pkfg,A ifgys xkWaoksa dk fodkl gks] rc tkdj lexz ns'k [kq'kgky gks ldsxkA vktknh ds ckn xkWa/kh ckck dh ckr tSls Hkqyk gh nh xbZA 'kgj] uxjksa esa vkSj uxj&egkuxjksa esa foLrkj ysrs pys x,A xkWao daxys vkSj misf{kr gksrs pys x,A

mls ekywe gS] fnus'k dh fdruh ixkj feyrh gSA og ;g Hkh tkurk gS fd lkekU; ifjokj dks thou&;kiu dju ds fy, fdrus :i;ksa dh t:jr iM+rh gSA og ;g Hkh tkurk gS fd mls ekg nks ekg vFkok pkj ekg esa dqN jde Hkh Hkstuh iM+rh gSA rc tkdj 'kgj dk [kpZ mBk ikrk gSA og fnus'k dks le>k,xk vkSj cryk,xk Hkh fd og mruh jkf'k rks ukSdjksa esa ckWaV nsrk gSA fQj D;k t:jr gS 'kgj esa jgdj le; cjckn djus dhA vxj og ,d ukStoku dks le>kus esa lQy gks x;k rks vius vkidks /kU; ekusxkA og xoZ ls ;g rks dg ldsxk fd ckck dks og Hkys gh lEiw.kZ :i ls ugha Hkh th ik;k rks D;k gqvk] ,d HkVds gq, vkneh dks jkLrs ij yk rks ldk gSA

fopkjksa dh J`a[kyk :dus dk uke gh ugha ys jgh FkhA mlus ns[kkA lwjt vLrkpy dh vksj cgk pyk tk jgk gSA ns[krs gh ns[krs lqjebZ vaf/k;kjk xgjkus yxk FkkA tM+&psru lc ,dkdkj gksus yxs FksA

cSyksa ds xys esa caW/kh ?kf.V;ksa ds en~ne Loj mlds dkuksa ls vkdj Vdjkus yxs FksA mlus vuqeku yxk;k fd iM+kslh fdlku ?kj ykSV jgk gksxkA dkSu gksxk\ og ;g ugha tkurkA

?kf.V;ksa ds Loj vc Li"V gks pys Fks ikl ls xqtjus okyk O;fDr vkSj dksbZ ugha cfYd xksfoan gh FkkA

es<+ ij cSBdj mlus Vsj yxk;h   dkSu xksfoUn\

gkWa nn~nk eSa xksfoUn gh gwWaA

vkt cM+h nsj dj nh rSusA tjk ,d ckr rks lquA ebus lqukS gksa--- rw [ksr ckjh lcS dqN cspu ckjks gSA dk dher /kjh gS rSusA dher tks Hkh /kjks gksos] oks ls iPphl&ipkl tknk nwaxksA fQj ?kj dh pht ?kjbZ esa jguh ch pkfg;s] tk esa HkykbZ Hkh gSA

xksfoUn dks mlus ekdwy tokc ns fn;k FkkA xksfoUn dks ekSu ikdj og eqLdqjk mBk FkkA xksfoUn ds ikl dksbZ tokc ugha FkkA jg Hkh dgkWa ldrk FkkA fcuk

izR;qRrj fn;s ogkWa ls f[kld tkuk gh Js;Ldj yxk Fkk mldksA lquk&vulquk djrs gq, og rsth ls vkxs c<+ x;k FkkA

उसे रोकते हुए उसने ऊँची आवाज में टेर लगायी.." अरे गोविन्द ..रुक तो सही...अयसी भी का जल्दी है....एक खुशखबरी तो अउर सुनत जा...

गोविन्द जानता था कि दद्दा से इतनी जल्दी पिंड छूटने वाला नहीं है. हारकर उसने बैलों को एक पेड़ के तने से बांध दिया और उलटे पैर लौट पड़ा.

" दद्दा..जे कछु कहने है, जल्दी से कह डालो...मुतके काम करने अबै बाकी पड़े हैं...

" अरे बड़ी खुशखबरी है रे...सुनतइ खुश हो जावेगा..दिनेश की चिठ्ठी आयी है. वो नौकरी छोड़-छाड़ के गाँव लौटन वालो है...है न खुशखबरी तेरे लाने ".

खबर सुनते ही गोविन्द का चेहरा फ़क पड़ गया था. उसकी सारी योजना खटाई में पड़ गई थी. दद्दा को धन्यवाद दे या फ़िर भला-बुरा कहे...वह समझ नहीं पा रहा था. शब्द जैसे गले में आकर अटक गए थे. चलने के पूर्व वह इतना ही कह पाया था. "अच्छा दद्दा. चलत हूँ, काल फ़िर मिलहें....." इतना कहते हुए वह अन्धेरे में गुम हो गया था.

सघन अन्धकार में दद्दा के चेहरे पर जैसे चांद ऊग आया था, जिसका प्रकाश वे स्वयं देख सकते थे.

(७)

छुटकारा पाना संभव नहीं.

घड़ी की टिक-टिक के साथ ही वह भी जाग रहा था. रात्रि के ग्यारह बज चुके थे और मार्ग्रेटा अब तक नहीं लौटी थी. नींद से आँखें बोझिल होने लगी थीं, सिर भारी होने लगा था, बावजूद इसके वह जाग रहा था. जाते समय वह उसकी गाड़ी लेती गई थी और कह गयी थी कि जल्दी ही लौट आएगी. लेकिन वह अब तक नहीं लौटी थी. उसे लेकर मन के आंगन में शंका और कुशंका के जहरीले नाग फ़न उठाये विचरने लगे थे. एक विचार आता. मन कहता, नहीं...ऎसा नहीं हो सकता. तत्काल दूसरा विचार आ धमकता. उसे भी

उसका मन स्वीकर नहीं कर पाता. फ़िर एक विचार कौंधा....हो सकता है कि नशे की हालत में कहीं उसकी गाड़ी ठुक तो नहीं गई? मन में ऎसा विचार आते ही वह असहज हो उठा था.

नये विचारों के साथ, नई दुनियां में उड़ान भरने वाली मार्ग्रेटा ने अपनी एक अनोखी दुनिया बसा ली है. उसके एक नहीं बल्कि कई-कई दोस्त हैं. उसी तरह उसने कई क्लब भी ज्वाईन कर रखे हैं उसने. उसे कई बार समझाने की कोशिश की कि कहीं उसके साथ कोई हादसा न हो जाये, या फ़िर कोई उसकी इज्ज्त न लूट ले, उसे ऎसी जगह नहीं जाना चाहिए. वह एक कान से सुनती और दूसरे से बाहर निकाल देती. इसके उलट वह उसके उपदेशों को सुनकर उसे एक जाहिल गवांर या मिसफ़िट होने का लेबल लगाते हुए कहती...दुनियां कहां से कहां निकल गई है मिस्टर और तुम हो कि अब तक पुरानी जड़ों को पकड़े बैठे हो. रही इज्जत लूटने की तो किसी में इतनी हिम्मत नहीं है कि वह मेरी ओर आंख उठाकर भी देख सके. जिम में जाते हुए मैंने अपने बचाव के सारे हुनर सीख रखें है. इसलिए मुझे डर नहीं लगता. एक फ़्रीलांस रिपोर्टर को तो हिम्मतवर होना बहुत जरुरी होता है..फ़िर हम इस रंगीन दुनिया में आए है तो हमें उसी तरह रंगीनियत में जीना चाहिए, उसका आनन्द उठाना चाहिए. यहीं नहीं और भी तरह-तरह के तर्क लगा कर वह उसे चुप रहने पर मजबूर कर देती.

मन में एक बार उठ खड़ी हुई विचारों की आंधी थमने का नाम नहीं ले रही थी. उसने निर्णय किया कि उसे अब सो जाना चाहिए. जो भी होगा सामने आएगा, तब देखा जाएगा. लाईट बुझा कर उसने चादर को खींचकर अपने पैरों पर डाला ही था कि गाड़ी की आवाज सुनाई दी. उसे यकीन हो गया कि वह लौट आयी है. दरवाजा हल्के से बंद था. उसने धक्का देकर खोला और लड़खड़ाते कदमों से चलते हुए अपने कमरे में समा गई. उसने जानबूझ कर चुप्पी साध ली थी कि व्यर्थ की बकवास में क्यों पड़ा जाए क्योंकि नशे में धुत्त व्यक्ति कुछ ज्यादा ही विद्वान हो जाता है. ऎसे समय में बात करना उचित नहीं होता.

नींद के बोझ से पलकें भारी होने लगी थी लेकिन घड़ी की टिक-टिक के साथ ही विचारों की टिक-टिक भी शुरु हो गई थी, जो थमने का नाम नहीं ले रहीं थीं. बिस्तर पर असहाय पड़ा वह अपने आपको कोस रहा था और कोस रहा था उस मनहूस घड़ी को जब उसके जीवन में मार्ग्रेटा का प्रवेश हुआ था. बीते हुए कल के पन्ने फ़ड़फ़ड़ाने लगे थे और वह उसमें समाने लगा था.

कम्पनी ने उसे एक पाश कालोनी में तीसरे माले पर एक फ़्लैट दे रखा था जो एक आयताकार जमीन पर निर्मित किया गया था. आयत के चारों ओर बिल्डिंगे खड़ी की गई थीं और आयत के भीतर एक खेल परिसर का निर्माण किया गया था जिसमें बच्चे खेल खेल सकें. पिछवाड़े की ओर खुलने वाली खिड़की के ठीक सामने वाली खिड़की जिस पर मोटा पर्दा डला रहता, इसी में वह रहा करती थी.

एक शाम. जब वह आफ़िस से घर लौटा तो उसने सहज रुप से अपनी खिड़की को खोला और अपनी दोनों कुहनियों को टिकाते हुए बच्चों को खेलता देखता रहा था. तभी सामने वाली खिड़की जो शायद ही कभी खुली हो, खुलती है और उसमें एक युवती प्रकट होती है. वह अपने हाथ हिला-हिलाकर अभिवादन करती नजर

आयी. कुछ देर बाद उसने अपनी हथेली को फ़ैलाया और फ़ूंक लगाते हुए एक लंबा फ़्लाईंग-किस हवा में उछाल दिया था. शायद वह अपने किसी ब्वायफ़्रेंड के लिए ऎसा कर रही होगी. वह यह समझ नहीं पाया कि ये सब उसके लिए ही किया रहा है. प्रतिदिन यह क्रम दोहराया जाता रहा और वह एक मूकदर्शक की तरह देखता रहा.

एक दिन. शाम को आफ़िस से लौटते हुए जैसे ही अपना दरवाजा खोला, एक लिफ़ाफ़ा पड़ा दिखा. उस पर पाने वाले का नाम नहीं था. उत्सुकतावश उसने लिफ़ाफ़ा खोला. तह किए गए कागज को सीधा किया. उसमें लिखा था-" हेलो जानेमन... बड़े बेरुखे हैं आप !. हम प्रायः रोज ही हाथ हिला-हिलाकर आपका इस्तकबाल करते रहे हैं, फ़्लाईंग-किस देते रहे हैं लेकिन आपने कोई प्रतुत्तर नहीं दिया. क्या इतना भी नहीं समझते कि एक लड़की अगर इतना कुछ कर रही है तो क्यों कर रही है? यह सब आपके लिए ही किया जा रहा था. मैं भी एक नामी-गिरामी प्रेस में काम करती हूँ. घर आकर कोई काम तो रहता नहीं, सो बोर होते रहती हूँ. अकेली हूँ न!. समय काटे नहीं कटता. चाहती थी कि आपसे दोस्ती जोड़ी जाए तो समय आराम से काटा जा सकता है. आपकी ओर से कोई पहल न होते हुए देखकर मैंने खुद चलकर यह लिफ़ाफ़ा आपके दरवाजे से अन्दर सरका दिया था. नीचे मेरा कांटेक्ट नम्बर नोट है, आप इस पर मुझसे संपर्क कर सकते हैं. मुझे आपके उत्तर की प्रतीक्षा रहेगी....... मार्ग्रेटा...

पत्र पढ़कर पूरा हुआ ही थी तभी कालबेल घनघना उठी. उसने वहीं से बैठे-बैठे कहा- "प्लीज कम-इन...दरवाजा खुला हुआ है." वह तब तक नहीं जान पाया कि आने वाला कौन है? शायद वह इस भ्रम में भी था कि कोई मित्र मिलने आया होगा. सहसा दरवाजा खुला. अपनी सैंडिले खटखटाते हुए उसने कमरे में प्रवेश किया. उसके प्रवेश के साथ ही खुशबूदार लैवेण्डर/परफ़्यूम की मादक गंध से पूरा कमरा गमगमा उठा. नजदीक आते ही उसने हाथ मिलाने के लिए अपनी हथेली को आगे बढ़ाते हुए कहा-" हाय हैण्डसम..आई एम मार्ग्रेटा...आपकी पड़ौसी....चौंक गए न मुझे देखकर...मैंने सोचा...जब दोस्ती करनी ही है तो इस बात का इंतजार ही क्यों किया जाये कि पहल कौन करेगा?. इधर से गुजर रही थी, सो सोचा कि चलकर मिल ही लिया जाये. अचानक...इस तरह आकर मैंने आपको डिस्टर्ब तो नहीं किया?"

अचकचा गया था देवेन्द्र कि उसके सामने एक हुस्न की परी अचानक आकर खड़ी हो गई है. झीने कपड़ों में से झांकता उसका गदराया यौवन और शरीर सौष्ठव को देखकर कहा जा सकता है कि विधाता ने उसे किसी खास सांचे में ढालकर बनाया होगा. उसकी पलकें झपकना भूल गईं थीं और वह फ़टी आँखों से उसके माधुर्य का रसास्वादन करने में खो सा गया था. वह प्रत्युत्तर में बहुत कुछ बोलना चाह रहा था लेकिन शब्द जैसे गले में आकर अटककर रह गए थे.

इस तरह एक कातिल हसीना ने उसके जीवन में प्रवेश किया था. रोज फ़ोन लगते. गुदगुदी बातें होतीं. मदहोश कर देने वाली खुमारी उस पर तारी होने लगती. कभी वह चुप्पी साध लेती. जानबूझ कर फ़ोन का स्विच आफ़ कर देती.. वह बार-बार फ़ोन लगाता लेकिन आउट आफ़ कव्हरेज की ट्युनिंग सुनकर उसकी

बेचैनी बढ़ जाती. कभी आ धमकती फ़िर एक लंबा अन्तराल बना लेती. वह यह सब जानते बूझते कर रही थी. जानती थी वह कि उसने अपने यौवन के मद में डूबो कर जिस तीर का संधान किया है, वह ठीक निशाने पर पड़ा है. वह यह भी जानती थी कि जितनी ज्यादा बेचैनी बढ़ेगी, उतना ही वह पास आता जायेगा और फ़िर वह इस कदर अपने आपको उलझा लेगा कि सिवाय मेरे, उसे कुछ भी दिखाई नहीं पड़ेगा.

बढ़ती बेचैनी अब व्यग्रता के रुप में ढलने लगी थी. उसकी स्थिति कुछ ऎसी होने लगी थी उसकी जैसे जल बिन मछली की होती है. न खाने-पीने से मन जुड़ पा रहा था उसका और न ही आफ़िस के काम को वह उतनी तल्लीनता से ही कर पा रहा था.

एक शाम. उसका रुठा हुआ वसंत लौट आया था. वियोग की तपिश से मुर्झाया चेहरा खिल उठा था. कामनाएं मचलने लगीं थीं. आकाश पटल पर काले कजरारे मेघों को देखकर जिस तरह मयूरा नाच उठता है, ठीक उसी तरह उसका मन आनन्दित होकर थिरकने लगा था " कहाँ गायब हो गईं थी मिस मार्ग्रेटा तुम....तुम्हें देखने को आँखें तरस गईं....कितनी बार मैंने फ़ोन लगाया, लेकिन कनेक्ट नहीं हो पाया...कहाँ चली गईं थीं तुम ". बिस्तर से उठते हुए उसने कहा.

" अभी जैसे-तैसे शाम हुई है और आप हैं कि बिस्तर से चिपके पड़े हैं.....क्या बात है...तबीयत तो ठीक है न !. उसने नजाकत के साथ कहा.

" नहीं..कुछ ऎसे ही...थोड़ा सिरदर्द हो रहा था....."

" लो... इतनी से बात है...अभी दर्द भगाये देते हैं".

उसने अपना पर्स खोला. एक बोतल निकाली और उठते हुए किचन से दो ग्लास और फ़्रीज से कुछ नमकीन और पानी की बोतल उठा लाई. बोतल का कार्क खोला और ग्लास में उडेंलकर बढ़ाते हुए कहा- " लीजिए...दो घूंट हलक के नीचे उतारिये.....दर्द अभी छूमंतर हो जायेगा".

" ये क्या....शायद शराब है?..मैं शराब नहीं पीता"

"कौन कमबख्त कहता है कि ये शराब है...ये जौ के दानों से बनी बियर है.. गर्मी के दिनों में इसका इस्तेमाल किया जाता है....जो दिल और दिमाक को ठंडक पहुंचाती है..... समझे."

"वाह कमाल की चीज है....सिर दर्द एकदम से गायब हो गया". चहका था देवेन्द्र.

" कितनी भीषण गर्मी पड़ रही है...क्या आपको ऎसा नहीं लग रहा..मुझे तो बेहद गर्मी लग रही है". कहते हुए उसने अपनी कुर्ती निकाल कर एक ओर रख दिया था. अब वह केवल ब्रेसरी में उसके सामने बैठी हुई थी. उसके तराशे हुए संगमरी जिस्म को देखकर देवेन्द्र के जैसे होश ही उड़ गए थे..दिल में खलबली से मचने लगी थी. वासनायें धधकती ज्वाला की तरह प्रज्जवलित हो उठी थीं. उसने आगे बढ़कर उसे अपनी बाहों

के घेरे में ले लिया था. मदहोशी के चलते क्या कुछ हुआ, उसे याद नहीं. लेकिन जब वह सोकर उठा तो बिस्तर खाली था. शायद वह जा चुकी थी.

इसके बाद वह चार-पांच दिन तक दिखाई दी और न ही उसका फ़ोन आया. देवेन्द्र अपनी ओर से उसे बार फ़ोन लगाकर संपर्क करने की कोशिश करता, लेकिन "आउट आफ़ रेंज" की ट्युनिंग सुनकर उसे खीज होने लगती. मन में विचार आया कि खुद चलकर उसके फ़्लैट में जाना चाहिए, लेकिन वह हिम्मत नहीं जुटा पाया था.

एक शाम. फ़ोन की घंटी बजी. उसने यह सोचते हुए लपक कर फ़ोन उठाया कि शायद मार्ग्रेटा का फ़ोन होना चाहिए. अंदाजा सही निकला. उसने एक ही सांस में न जाने कितनी ही बातें कह सुनायी. शिकायतें दर्ज कराते हुए अब वह अन्दर से पूरी तरह खाली हो गया था. उसे अब मार्ग्रेटा के जवाब का इंतजार था.

" देवेन्द्र.. मुझे नौकरी से टर्मिनेट कर दिया गया है और अल्टिमेटम भी दिया गया है कि मैं एक सप्ताह के भीतर फ़्लैट खाली कर दूं . अब आप ही बतलायें मैं कहाँ जाऊँ...क्या इतने कम समय में शहर में दूसरी जगह तलाशी जा सकती है? .फ़िर एक अकेली लड़की को कोई भी इतनी आसानी से फ़्लैट नहीं देगा...पहले तो तरह-तरह के सवाल पूछे जाएंगे... कई-कई जानकारियां ली जाएंगी, तगड़ी रकम पगड़ी के रुप में ली जाएगी, तब कहीं जाकर फ़्लैट मिल पाएगा. आप मेरे दोस्त हैं. ऎसी कठिन परिस्थिति में मुझे आपका साथ चाहिए. क्या हम एक छत के नीचे रहते हुए अपनी दोस्ती का निर्वहन नहीं कर सकते? मेरे वहाँ रहते जो भी खर्च आएगा, उसमें मैं आपसे शेयर करुंगी. कुछ दिनों की बात है, दूसरी नौकरी लगते ही मैं आपका फ़्लैट खाली कर दूंगी. मुझे आपके उत्तर की बेसब्री से प्रतीक्षा रहेगी."

प्रत्युत्तर में वह कुछ कह पाता, इसके पहले ही मार्ग्रेटा ने फ़ोन काट दिया था. अब उसकी बारी थी. उत्तर उसे देना था. हाँ कहे या फ़िर सिरे से इंकार कर दे. वह गंभीरता से सोचने लगा था. " उसका वर्तमान तो मैं जानता हूँ कि वह एक रईस बाप की इकलौती संतान है,. रही भविष्य की बात, तो वह उससे अपना फ़्लैट खाली करने को तो कह ही सकता है, लेकिन उस स्थिति में क्या होगा जब उसके माता-पिता उससे मिलने न आ धमके. वे चार-छ महिने के अंतराल में आते हैं. चार-छः दिन रुककर लौट भी जाते हैं. लेकिन आने से पहले सूचित जरुर करते हैं. यदि ऎसा कुछ हुआ तो उसे किसी होटल में तब तक रुकने को कहा जा सकता है,. फ़िर वह अपनी ओर से कह भी चुकी है कि दूसरी नौकरी लगते ही शिफ़्ट हो जाएगी". यह सोचते हुए उसने मार्ग्रेटा को फ़ोन लगाया और कहा कि जब तक तुम्हारे रहने के लिए दूसरी व्यवस्था नहीं हो जाती, तब तक वह उसके साथ रह सकती है.

यही तो चाहती थी मार्ग्रेटा. अपने मन की मुराद पूरा होते देख वह चहक उठी थी. उसने तत्काल अपना सामान पैक किया और आ धमकी. फ़्लैट में दो बेडरूम थे. एक पर उसने कब्जा जमा लिया था.

मार्ग्रेटा का साथ पाकर खुश था देवेन्द्र. प्रेमालाप में मगन रहते हुए उसका दिन कैसे बीत जाता, पता ही नहीं चल पाता. हाँ, उसके मन में एक शिकायत जरुर बनी रहती कि भगवान ने रातों को इतनी छॊटी क्योंकर बनाया होगा?.

एक दिन. किसी काम से वह बाहर गया हुआ था. तभी फ़ोन की घटीं टिनटिना उठी. घंटी बजती रही थी लगातार, लेकिन मारग्रेटा ने जानबूझकर फ़ोन नहीं उठाया था. वह नहीं चाहती थी कि किसी को पता चले कि वह धर्मेन्द्र के साथ “लिव-इन-रिलेशन” में रह रही है. आने वाला फ़ोन धर्मेन्द्र के पिताजी का था. घर से निकलने के पहले वे इतल्ला नहीं दे पाए थे. सो स्टेशन पर से उन्होंने फ़ोन लगाते हुए सूचित करना जरुरी समझा था. उन्होंने आटॊ लिया और सीधे चले आए थे.

कालबेल की आवाज सुनकर उसने यह सोचते हुए दरवाजा खोला कि देवेन्द्र लौट आया है. दरवाजा खुलते ही उसकी नजर एक अपरिचित व्यक्ति पर पड़ी. उसने देखा. धोती-कुर्ता पहने उस व्यक्ति ने सिर पर टोपी पहन रखी है और आँखों पर चश्मा चढ़ा हुआ है तथा हाथ में छड़ी उठा रखी है. देखते ही समझ गई कि हो न हो देवेन्द्र के पिताजी ही होने चाहिए. वह कुछ कह पाती, उन्होंने भारी-भरकम आवाज में पूछा-“ तुम कौन हो और देवेन्द्र कहाँ है? ऎसा तो नहीं कि उसने फ़्लैट बदल लिया है, कहीं मैं गलत पते पर तो नहीं आ गया ?”.

“ जी नहीं आप सही पते पर आए हैं...आइए...अन्दर तो आइए...कहते हुए वह पीछे हट ली थी. अपने जूते खटखटाते हुए वे अन्दर चले आए थे और एक कुर्सी पर बैठ गए थे. बैठते ही उन्होंने पूछा-“ बेटी, तुम कौन हो, पहचान नहीं पाया. इससे पहले तो तुम्हें यहाँ नहीं देखा?”.

सिट्टिपिट्टी गुम हो गई थी मारग्रेटा की कि क्या जवाब दे. क्या वह यह कहकर बतलाए कि वह आपके बेटे की लव्हर है...दोस्त है, या यह बतलाए कि वह एक पेईंग-गेस्ट की तरह यहाँ रह रही है, या कि वह धर्मेन्द्र के साथ लिव-इन-रिलेशन में रह रही है?. किसी तरह उसने अपनी बिखरी हुई हिम्मत को समेटते हुए कुछ कहना चाहा, लेकिन शब्द गले में आकर अटक कर रह गए थे. वह एक बुत की तरह नीची गर्दन लिए खड़ी रह गई थी. उसे इस बात का भी भय मन में समाया हुआ था कि उसे अस्त-व्यस्त कपड़ों मे देखकर न जाने उन्होंने क्या कुछ नहीं सोचा होगा उसके बारे में.

पिता समझ गए. न समझने जैसी कोई बात ही नहीं थी और न ही जवाब-सवाल करने की जरुरत थी. उन्होंने दुनियां देखी है. दुनियां की रीति-रिवाजों से परिचित थे और जानते थे कि निपट गांव से चलकर शहर आया आदमी किस तरह शहरों की चकाचौंध में अपने को झोंक देता है. शहर उसे कितना अपना बना पाता है, ये तो वे नहीं जानते, लेकिन इतना अवश्य जानते है कि गाँव से निकला नौजवान एक बार शहर आता है तो दुबारा पलटकर गाँव नहीं लौटता. गाँवों में बचे रहते है अपाहिज, लंगड़े, लूले, बिमार, लाचार बूढ़े लोग, जो अपना सर्वस्व लुटा कर, आशा भरी नजरों से अपने बेटों की राह तकते हुए अपनी आँखें गवां देते है,

लेकिन वे निष्ठुर कभी नहीं लौटते. उन्होंने अपने बेटे का वर्तमान और खुद के भविष्य का आकलन कर लिया था और वापिस लौटने का मन बना लिया था.

कुर्सी से उठते हुए उन्होंने कमरे का एक चक्कर लगाया. टेबल पर बिखरी शराब की बोतलें और ग्लास देखकर उनकी आँखें नम हो आयी थी. बाहर निकलने से पहले वे इतना ही कह पाये थे कि देवेन्द्र को बतला देना कि उसके पिता आए थे लेकिन किसी जरुरी काम की वजह से रुक नहीं पाए.

थका-हारा देवेन्द्र घर लौटा. अपनी बुझी हुई आवाज में उसने बतलाया कि पिताजी आए थे और तत्काल ही वापिस लौट गए. यह सुनते ही देवेन्द्र सन्न रह गया था. धड़कने तेज होने लगी थी और आँखों के सामने अन्धकार नाचने लगा था. सोचने-समझने की बुद्धि कुंठित होने लगी थी. काफ़ी देर तक अवसन्न स्थिति में बने रहने के बाद वह कुछ सामान्य स्थिति में आने लगा था.

वह गंभीरता से सोचने लगा था कि देवता तुल्य उसके पिताजी गाँव से चलकर उससे मिलने आए थे और बिना कुछ कहे वापिस लौट गए ?. कैसे क्या बीती होगी उनके मन पर ?. कितना संताप हुआ होगा उन्हें यहाँ आकर? कितना कुछ सोच रखा होगा उन्होंने मेरे बारे में? न जाने कितने सपने बुने होंगे उन्होंने मुझ को लेकर और मैं हूँ कि उन सपनों में रंग नहीं भर पाया?. सोचते-सोचते उसकी रुह कांपने लगी थी और आँखों से आँसू झरझरा कर बह निकले थे.

मिचमिची आँखों को पोंछते हुए उसने एक बोतल निकाली. कार्क खोला. गिलास में उंडेला और तब तक पीता रहा, जब तक वह नशे में धुत नहीं हो गया था. मारग्रेटा ने उसे अपनी बाहों का सहारा देते हुए किसी तरह बिस्तर तक लाया और सुला दिया.

मन पर लगे आघातों को शराब के सहारे मिटाया जा सका होता तो न जाने कितने ही गमों से सहज ही में छुटकारा पाया जा सकता है, लेकिन होता है इसके उलट है. नशे की हालत में आदमी और ज्यादा दार्शनिक हो जाता है...खुद स्वयं से बात करने लगता है और अक्सर बड़बड़ाने लगता है...चीखने-चिल्लाने लगता है और अजीबो-गरीब हरकतें करने लगता है.

हड़बड़ा कर उठ बैठा धर्मेन्द्र. वह कितनी देर रात तक नशे की हालत में सोता पड़ा रहा था, उसे याद नहीं. उसने लाईट आन किया. घड़ी की ओर देखा. रात के पांच बज रहे थे. उसके ठीक बगल में मारग्रेटा चित पड़ी सो रही थी. लालिमायुक्त उसके होंठों पर मधुर मुस्कान खेल रही थी. शायद वह कोई हसीन सपना देख रही होगी. अस्त-व्यस्त कपड़ों में से उसका जोबन बाहर तांक-झांक रहा था. वह इस निश्कर्ष पर पहुंच चुका था कि मार्ग्रेटा से छुटकारा पाना अब इतना आसान नहीं है. वह उसके बगैर एक पल भी नहीं रह सकेगा. रही पिताजी से बात करने की,तो वह गाँव जाकर उन्हें सब कुछ बतला देगा. पिता उदारमना है, मान जायेंगे. मानेंगे कैसे नहीं,..एकलौती संतान जो हूँ मैं उनकी.

उसकी उंगलियां मार्ग्रेटा की उलझी हुई लटों से खेलने लगी थी. देर तक लटों से खेलते रहने के बाद अब उसकी हथेली उसकी संगमरमरी देह पर फ़िसलने लगी थी.

(८) **पलायन**

सूरज के उगते ही माहौल गरमाने लगता और दोपहर होते-होते आसमान से आग के गोले बरसने लगते. सड़कें सूनी हो जातीं. लोग-बाग अपने-अपने घरों में दुबक जाते. पशु किसी पेड़ की छाया में जाकर छिपने की नाकाम कोशिश करते नजर आते. लू के थपेड़े किसी छुट्टे सांड की तरह सिर उठाये गली-चौराहों पर धमाचौकड़ी मचाते हुए सरपट दौड़ लगाने लगते. कभी किसी के दरवाजे पर अपने नुकिले सिंग घुसेड़ कर उखाड़ डालने का प्रयास करते. लोग घरों में दुबक जाते और कूलर का सहारा लेने पर मजबूर हो जाते, लेकिन इस इस बार की पड़ने वाली भीषण गर्मी ने अच्छे-अच्छे कूलरों की औकात ही बता दी थी. वे सब नाकारा सिद्ध होने लगे थे. जिन घरों में कूलर नहीं होते, वे बांस का बना पंखा झलते हुए कुछ राहत पाने की कोशिश करते अथवा अंगोछे को हिला-हिला कर शरीर पर बहते पसीने को सूखाने का असफ़ल प्रयास करते. बड़े घर के लोग खिड़की-दरवाजों को बंद कर मोटा पर्दा डाल देते और एसी. चलाकर शीतल हवा का आनन्द लूटते.

अब ऎसी कठिन परिस्थिति में निर्मल करे भी तो क्या करे? वह जिस होस्टल में रहकर पढ़ाई करने के लिए अपना गाँव छोड़कर, आया है, का बुरा हाल है. उसके दड़बेनुमा कमरे में दो मित्र और रहते हैं. उसमें कूलर लगा तो है लेकिन पानी की समस्या के चलते किसी काम का नहीं हैं. वार्डन की भी अपनी विवशता है. वह पानी की व्यवस्था करे भी भी तो कहाँ से? कैम्पस में लगा हैण्डपंप पानी की जगह हवा उगलता है. नल में दिन में एक बार पानी आता है, वह भी नाम मात्र को. क्या नहाये और क्या निचोड़े वाली कहावत यहाँ चरितार्थ हो रही थी. कमरे में हवा आने के लिए एकमात्र खिड़की ही बचती है. उसे खुला रखे तो भी गर्म हवा के झोंके अन्दर प्रवेश कर जाते हैं, और न खोले तो उमस के मारे और भी बुरा हाल होने लगता है. बिजली भी अपनी मर्जी की मालिक है. आयी तो आयी, नहीं आयी तो नहीं आयी. किसी तरह राम-राम रटते हुए दिन काटना होता है. इसके सिवाय और कोई दूसरा रास्ता भी नहीं बचता उसके पास.

कई बार उसने हास्टल बदलने का मन भी मनाया लेकिन उसे मन-मसोस कर रह जाना पड़ा था. शहर में कई नामी-गिरामी हास्टल तो हैं, जिनमें एसी. वगैरह की उत्तम व्यवस्था है, लेकिन उनका खर्च उठा पाना, उसके बूते की बाहर की बात थी. पिताजी की आर्थिक स्थिति इतनी मजबूत नहीं थी कि वे उसे एक निश्चित रकम से ज्यादा की पूर्ति कर सके. राम-राम रटते हुए पहाड़ जैसा दिन तो कट जाता और दिन ढलते ही वह पास वाले बागीचे की शरण में चला जाता है. उसकी बगल में कुछ पुस्तकें, नोटबुक, पेन-पेंसिलें आदि दबी होतीं. सघन पेड़ों के ठीक नीचे वाली बेंच उसकी शरण-स्थली बनी हुई थी. बेंच के एक कोने में पुस्तक-कापी रखने के बाद, बाकी के बचे हुए स्थान पर एक चादर को तह करके बिछा देने के बाद ही वह उस पर बैठ पाता है. दिन भर धूप में तपती सिमेन्ट की बेंच पर बैठ पाना कोई आसान काम थोड़े ही है.

किताब खोलने के पहले वह मुनिसिपल कार्पोरेशन को धन्यवाद देना नहीं भूलता. बेंच के नजदीक ही लैम्प-पोस्ट है जिस पर नियान लाईट सफ़ेद-झक रोशनी फ़ेंकते हुए बागीचे की शान को बढ़ा रहा होता है. इसकी रोशनी में उसकी पढ़ाई होती है. बागीचे में आने वाला वह एकमात्र सदस्य नहीं है, बल्कि गर्मी से त्रस्त शहर की कई नामी-गिरामी हस्तियां भी यहाँ आकर बागीचे की शान में बढ़ौतरी करते हैं. जाहिर है कि उनके बीच बातचीत का दौर भी चलता हैं. हर किसी के पास अपने-अपने किस्से हैं, अपने-अपने दुख-दर्द हैं,जिन्हें वे आपस में बांटकर हलका होने का सायास प्रयास करते हैं. ऎसा भी नहीं है कि आने वाले सभी बौडम किस्म के लोग हैं. उसे पढ़ता देख, लोग दूरी बनाकर बैठने लगे हैं. वे नहीं चाहते कि उनकी वजह से उसका कैरियर खराब हो जाए. दिन भर का गर्माया माहौल अब धीरे-धीरे सामान्य होने लगता है और ठंडी हवा के झोंके चलने लगते हैं, जो जलते बदन को राहत देने के लिए काफ़ी होते हैं. किसी सिद्ध योगी की तरह वह अपना ध्यान केन्द्रीत करते हुए पढ़ाई में तल्लीन हो जाता है. देर रात तक पढ़ने के बाद ही वह हास्टल वापिस लौटता है.

कमरा अब भी गर्मा रहा होता है. वह बाथरुम में जा घुसता है और शावर आन कर देता है. कुनकुने पानी के छींटे शरीर पर पड़ते ही कुछ राहत मिलती है. देर तक शावर के नीचे खड़े रहने के बाद वह बिस्तर पर पसर जाता है. निद्रा देवी की उस पर बड़ी कृपा है. बिस्तर पर पसरते ही वह गहरी नींद के आगोश में चला जाता है.

चौथे पहर उठ बैठता है निर्मल. इस समय उसके रुम-पार्टनर गहरे खुर्राटे भर रहे होते हैं. नित्य क्रिया-कर्म से फ़ुर्सद पाकर वह कुछ निश्चित किताबों का बण्डल उठाकर बागीचे में जा पहुँचता है. उसकी वह बेंच उसका इन्तजार करती सी लगती है. इस समय बागीचे में उसके सिवाय कोई नहीं होता. एक गहरा सन्नाटा पसरा रहता है चारों तरफ़. जैसे ही दिन निकलने को होता है, हवाखोरों की चहल-पहल बढ़ने लगती है. कोई तेज चाल में चलता हुआ अपने फ़ेंफ़ड़ों में अधिक से अधिक आक्सीजन भरने का उपक्रम करता है, तो कोई हाथों को सीने से चिपकाये पंजे के बल दौड़ लगाते हुए बागीचे का चक्कर लगता है. जिन लोगों को जीवन में कभी ठहाके मारकर हंसने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ, उन्होंने लाफ़िंग-क्लब ज्वाईन कर रखा है और एक निश्चित समय पर वे यहाँ आकर हंसने-हंसाने का सायास प्रयास करते हैं. शेष दिन में वे कितना हंस पाते हैं, कोई नहीं जान पाता. वह तो केवल इतना भर जान पाया है कि लाफ़िंग-कल्ब वाले उससे एक लंबी दूरी बना कर हंसते-हंसाते है. उसे डिस्टर्ब नहीं करते हैं. निर्मल इन सभी महानुभावों के प्रति धन्यवाद ज्ञापित करने का मौका हाथ से नहीं जाने देता.

एक सुबह. किताबों का बण्डल उठाए वह बागीचे में जा पहुँचा. इतनी रात गए उसके अलावा कोई यहाँ आता-जाता नहीं है. बागीचे में चारों ओर सन्नाटा पसरा पड़ा था. हाँ, कभी-कभार किसी पखेरु के पंख फ़ड़फ़ड़ाने की आवाज सुनाई दे जाती अथवा झिंगुर की टिर्र-टिर्र. बाकी का माहौल एकदम शांत बना रहता. बेफ़िक्री से चलता हुआ वह अपने निर्धारित स्थान की ओर बढ़ता है एक अपरिचित-अनजान खूबसूरत युवती को पास वाली बेंच पर बैठा देखकर ठगा सा रह जाता है. युवती के शारीरिक शौष्ठव को देखकर उसने सहज ही अनुमान

लगा लिया कि उसकी उम्र कोई बीस-बाईस के बीच रही होगी. इससे पहले उसने उस युवती को यहाँ आते-जाते कभी नहीं देखा था. निश्चित तौर पर तो वह यह नहीं कह सकता कि युवती इसी इलाके की रहने वाली है या किसी अन्य इलाके की है. बेफ़िक्री के आलम में डूबी युवती ने बेंच की बेक से सिर टिकाते हुए अपनी आँखे बंद कर रखी थी, संभव है वह प्राणायाम की मुद्रा में बैठी थी अथवा किसी गहरे सोच में डूबी हुई थी, यह तो वह नहीं जान पाया. हाँ, केवल इतना जान पाया था कि एक सर्वथा अनजान-अपरिचित युवती के पास बैठना और वह भी सुनसान जगह में, कितना अनर्थकारी सिद्ध हो सकता है. यह भी हो सकता है कि वह किसी मुर्गे को फ़ांसने के लिए जाल बिछाये बैठी हो और मुर्गे के फ़ंसते ही चीख-चिल्लाकर एक नया वितण्डा खड़ा कर देगी. उसके मन में पता नहीं क्या भरा पड़ा है, यह तो वह नहीं जानता. हाँ, इतना जरुर जानता है कि इस तरह की असामान्य घटनाएँ शहरों में अक्सर घटते ही रहती हैं.

उहापोह की स्थिति से निकलकर उसने निर्णय लिया कि समय खराब न करते हुए उसे अपना अभ्यास प्रारंभ कर देना चाहिए. देर-सबेर जब वह अपनी आँखे खोलेगी तो उसे पास बैठा पाकर, बातें करेगी. अपना परिचय देगी. तभी उसके बारे में कुछ जाना जा सकता है. फ़िर उसके मन में कोई खोट-कपट नहीं है, और न ही तृष्णा. फ़िर डरने जैसी कोई बात नहीं है. यह सोचते हुए वह अपनी निर्धारित बेंच पर बैठ गया और किताब में डूबने का प्रयास करने लगा.

उसका शरीर बेंच से तो चिपका था लेकिन मन साथ नहीं दे रहा था. उसकी नजरें बार-बार उस युवती के नूरानी चेहरे पर जाकर ठहर जाती और वह उसे जी भर के निहारने लगता. तभी उसे अपनी भूल का अहसास होता. नजरें पीछे हट जाती. बंद किताब फ़िर खुल जाती और वह अक्षरों के चक्रव्यूह में उलझने लगता. लेकिन मन था कि बार-बार उचककर उस युवती के इर्द-गिर्द चक्कर काटने लगता.

बागीचे में उन दो के अलावा तीसरा और कोई नहीं था. उसने एक बार फ़िर गौर से उसके शरीर पर नजरें केन्द्रीत करते हुए मुआयना करना शुरु किया. वह अब भी निश्छल मुद्रा में आँखें बंद किए हुए बैठी हुई थी. उसे इस बात पर आश्चर्य हो रहा था कि स्त्री जात, अपने आस-पास किसी अजनबी की उपस्थिति जानकर/पाकर अथवा उसकी छाया मात्र को देखते ही भांप जाती हैं कि सामने वाले के मन के कोई खोट तो नहीं है. ईश्वर ने वरदान स्वरुप स्त्री जात को एक अतिरिक्त छटी इंद्रीय दे रखी है कि वे पराये पुरुष को देखते ही उसके मन की बातों को सहजता से जान जाती हैं और सतर्क हो जाती हैं. शायद कुछ अनोखे किस्म की युवती थी वह जो पास में बैठे युवक की उपस्थिति से बिलकुल ही अनजान बनी हुई थी.

रात की कालिमा का धुधंलका धीरे-धीरे छंटने लगा था. सहसा उसके मन में विचार कौंधा कि उसे जगा देना चाहिए. वह अपने स्थान से उठकर खड़ा हुआ ही था कि युवती के पर्स में रखा मोबाईल घनघना उठा. उसके उठते कदम वहीं रुक गए. मोबाईल की घंटी लगातार बजती रही थी. उसे पक्का यकीन हो गया था कि फ़ोन की घंटी की आवाज सुनकर वह खुद जाग जाएगी. लेकिन उसके शरीर में किसी भी प्रकार की कोई हरकत नहीं हुई. यह देखकर वह सोचने पर मजबूर हो गया था कि कहीं वह नाटक तो नहीं कर रही है? कपट-जाल बिछाकर किसी को फ़ांसने के लिए षड़यंत्र तो नहीं रचा होगा इसने?. समाचार पत्रों में इस तरह की अनेकानेक

घटनाओं के बारे में वह पहले भी पढ़ चुका था. दूसरा मन कहता कि देखने-परखने में वह उठाईगिर तो बिल्कुल भी नहीं लगती. फ़िर उसने जो कपड़े पहन रखे हैं, उसे देखकर तो यही कहा जा सकता है कि वह किसी सभ्य घराने से ताल्लुक रखती है

आखिरकार उसने निर्णय कर लिया था कि उसे अब जगा देना चाहिए. अपनी हथेली को आहिस्था से बढ़ाते हुए उसने उसके कंधे पर रखा और हलके से झझकोरा. स्पर्ष मात्र से ही उसका शरीर एक तरफ़ लुढ़क कर नीचे गिरने को हुआ. गिरने से बचाने के लिए सहज रूप से उसका बाय़ां हाथ आगे बढ़ा और दांया हाथ उसकी पीठ पर चला गया. पीठ पर हाथ पहुंचते ही उसने गीलापन महसूस किया. अपनी हथेली को परे हटाते हुए उसने देखा कि उसकी हथेली खून से लथपथ हो गई है. अपनी हथेली को खून से सनी पाकर उसके होश उड़ गए. सोचने –समझने की बुद्धि कुंठित होने लगी. शरीर बुरी तरह से थरथर कांपने लगा और आँखों के सामने अंधकार ताण्डव करने लगा. उसने किसी तरह अपने को संभाला और तत्काल उसे उसी स्थिति में बेंच की बेक से टिका दिया.

उसका अस्थिर मन घड़ी के पेन्डुलम की तरह फ़िर दोलायमान होने लगा था. कभी इधर तो कभी उधर. एक विचार मन में आया कि उसे चुपचाप यहाँ से खिसक जाना चाहिए. देर-सबेर पुलिस को पता तो चल जाएगा कि बागीचे में किसी महिला का लाश पड़ी हुई है. वह तफ़्तीश करेगी और अपराधी को ढूँढ निकालेगी. फ़िर मन में एक विचार कौंधा कि एक पढ़े-लिखे और जागरुक नागरिक का कर्तव्य है कि अपराध की जानकारी रहते उसे पुलिस को सूचित करना चाहिए. लेकिन पुलिस हमेशा से ही सूचना देने वाले को अपने शक के घेरे में लपेट लेती है और उसी से उलटे-सीधे जवाब करती है, जबकि अपराधी कोई और होता है. यदि उसे अपराधी मान लिया गया तो तत्काल ही उसे जेल में डाल दिया जाएगा. मुकदमा भी चलाया जाएगा, जब तक यह सिद्ध नहीं हो जाता कि अपराध उसने नहीं बल्कि और किसी ने किया है,तब तक उसे जेल में सड़ना होगा. सच को सच साबित करने में दिन-दो दिन नहीं, बल्कि सालों भी लग सकते हैं. यदि ऎसा हुआ तो उसका कैरियर ही समाप्त हो जाएगा. वह कहीं का नहीं रहेगा. उचित होगा कि उसे यहाँ से खिसक ही जाना चाहिए. ऎसा सोचते हुए उसने अपनी किताबों को समेटा और वहाँ से भाग खड़ा हुआ.

बागीचे के गेट के पास पहुँचते ही उसके पैरों में जैसे ब्रेक ही लग आए थे. उसने अपनी किताबों के बण्डल की बारीकी से जाँच की. सारी किताबों को तो वह बटोर सका था लेकिन घबराहट में डायरी वहीं छूट गई थी. एक पेड़ की आड़ में खड़ा होकर वह सोचने लगा था –“ भले ही मैं वहाँ से भाग निकला, लेकिन मेरी डायरी तो इस बात की गवाही देगी कि मैं वहाँ उपस्थित था. फ़िर डायरी में मेरा नाम-पता, फ़ोन नम्बर आदि सभी कुछ तो नोट है. संभव है कि डायरी पर खून से सनी हथेली के निशान न पड़ गए हों?. हाल-फ़िलहाल वह पुलिस के चंगुल से बच तो जाएगा लेकिन सबूतों के आधार पर उसे जल्दी ही गिरफ़्तार कर लिया जाएगा. बाद में पता नहीं उसकी कैसे गत बनेगी?”. दुर्गति की कल्पना मात्र से वह सिहर उठा था.

घबराहट में फ़िर कोई बड़ी भूल न हो जाए, यह सोचते हुए उसने किताबों का बण्डल एक पेड़ की कोटर में जतन से रख दिया और सरपट दौड़ते हुए वह उसी स्थान पर जा पहुँचा. युवती का शरीर उसे उसी स्थिति में

मिला, जैसा कि वह छोड़ आया था. बेंच के ठीक पास डायरी पड़ी हुई थी. बिना देर लगाये उसने डायरी उठाई और भाग खड़ा हुआ. वह तब तक भागता रहा था, जब तक गेट नहीं आ गया. उसने फ़ौरन पेड़ की कोटर से किताबें निकाली और बागीचे के बाहर आ गया. उसे इस बात पर पूरी आश्वस्ति हो रही थी कि किसी ने, न तो उसे अन्दर जाते देखा था और न ही बाहर निकलते देखा था. उसे इस बात पर भी संतोष हुआ कि संयोग से उस समय चौकीदार भी वहाँ उपस्थित नहीं था.

तेज कदमों से चलते हुए वह अपने हास्टल पहुँचा. उसके रूम-पार्टनर अब तक सोए पड़े थे. यह एक अच्छा संयोग था उसके लिए. बाथरूम में घुसते हुए उसने डायरी पर खून के पड़े निशानों को करीने से साफ़ किया. कपड़े पहिने ही पहिने उसने शावर आन कर दिया था ताकि खून के निशान यदि कहीं पड़ भी गए हों तो वे भी धुल जाएं. देर तक शावर के नीच खड़े रहने के बाद वह कुछ नार्मल हो पाया था, बावजूद इसके, दिमाक अब भी बिजली के मीटर के तरह तेजी से घूम रहा था.

बाथरूम से निकलकर वह किसी कटे हुए लठ्ठे की तरह आकर बिस्तर गिर पड़ा था. मन था कि स्थिर ही नहीं हो पा रहा था. पल भर को एक विचार कौंधता तो दूसरा तत्काल उपस्थित हो जाता. वह गम्भीरता से सोचने लगा था कि एक मृत शरीर चलकर बागीचे तक तो आ नहीं सकता?. फ़िर उसका डील-डौल देखकर सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि उसका वजन चालीस-पैतालिस किलो से किसी भी प्रकार कम नहीं होगा. फ़िर एक मृत शरीर को उठाकर लाना एक आदमी के बस की बात नहीं है. निश्चित ही इस काम को चार-पांच लोगों ने मिलकर अंजाम दिया होगा. दूसरा सवाल यह उठता है कि आखिर उस युवती की हत्या क्यों की गई?. इसका सीधा सा उत्तर है कि युवती किसी काम से घर से निकली होगी और मनचलों ने उसे अगवा कर लिया होगा और सूनी जगह पाकर उसके साथ बारी-बारी से बलात्कार किया होगा. चुंगल से छूट कर युवती पुलिस स्टेशन जाकर शिकायत न कर दे, इस डर के चलते उन्होंने उसका मुँह बंद कर देना ही उचित समझा होगा और उसका मर्डर कर दिया. फ़िर शव को बागीचे में लाकर पटक दिया.

बागीचे में आने वाले लोग अक्सर शाम के समय आते हैं, कुछ देर रुकते है और रात के गहराने के साथ ही अपने-अपने घरों को लौट जाते हैं. नौ-दस बजते ही बागीचा सुनसान हो जाता है और चौकीदार गेट पर ताला जड़कर आराम से सो जाता है. इसी का फ़ायदा उठाते हुए दरिन्दों ने बागीचे की नीची दीवर को फ़ांदा होगा और उसके शरीर को बेंच के हवाले करते हुए भाग खड़े हुए होंगे.

मन के आंगन में उठ खड़ा हुआ तूफ़ान अभी तक शांत नहीं हो पाया था. एक विचार आता, उसे अशांत कर जाता. फ़िर दूसरा उठ खड़ा होता. विचारों के श्रृंखला थमने का नाम नहीं ले रही थी. उसने गहरी सांसे लीं. भटकते हुए मन को किसी तरह शांत किया और अब वह गंभीरता से सोचने लगा था- "पता नहीं, इस देश में आखिर इस तरह की घटिया मानसिकता अमरबेल की तरह क्यों फ़ल-फ़ूल रही है? युवती तो युवती, प्रौढ़ स्त्रियों सहित नाबालिक बच्चियों के साथ भी रेप किया जा रहा है और बाद में उनकी निर्मम हत्या कर दी जाती है. यदि युवती इन मनचलों का विरोध करती है तो उन पर एसिड फ़ेंककर उनका चेहरा विकृत कर दिया जाता हैं. कभी दहेज के नाम पर उनका शोषण होता है तो गर्भ में ही उन्हें मार डाला जाता है. महिलाओं को

अपने सगे-संबंधियो पर पूरा भरोसा रहता है और वे उनके संरक्षण में अपने आपको सर्वथा सुरक्षित महसूस करती हैं. उन्हें पूरा विश्वास रहता है कि वह उसके साथ कोई गलत हरकत नहीं करेगा और इसी भरोसे की आड़ में वे शिकार हो जाती हैं. "भरोसा" शब्द भी अब विकृत मानसिकता की श्रेणी में गिना जाने लगा है. उसका अपना तर्क है कि इन्टरनेट और एनड्राईड फ़ोनों के फ़ैलते मकड़जाल भी सेक्स परोसने में अहम भूमिका निभा रहे हैं. बस एक क्लिक करने भर की जरुरत है कि सारे अश्लील दृष्य़ देखे जा सकते है. इस सहज और सुलभ माध्यम का फ़ायदा उठाकर ये शैतान किसी युवती को फ़ंसाने के लिए व्हीडियो बनाकर अपलोड करते है, और एक चेहरे पर उस युवती का चेहरा चस्पा करके उसे सार्वजिक कर देने की धमकी देकर उनका शोषण करते है. समाज में बदनामी न हो इस भय के चलते वे इस दलदल में उतरने के लिए राजी हो जाती हैं.

पता नहीं क्या हो गया है इस देश के लोगों को, इनकी सोच को, जो समाज में विकृति फ़ैलाने में आमादा हो गए है? वह जानता है कि भारत ही विश्व का एक मात्र ऎसा देश है जो अनादि काल से नारियों का सम्मान करता आया है. कभी काली के रुप में तो कभी दुर्गा के रूप में नारियों को पूजा गया है.... उन्हें सम्मान दिया गया है.

नारियों को सम्मान देने, उन्हें देवी का दर्जा देकर पूजने वाले इस देश की सोच अचानक कैसे बदल गई?. यह एक विचारनीय प्रश्न है और इस पर हम सभी को गम्भीरता से सोचने-विचारने की जरुरत है. केन्द्र की सरकार हो या फ़िर राज्य की, सभी इस बिमारी की रोकथाम के लिए कड़े से कड़े रूख अपना रही है. उन्हें फ़ांसी पर चढ़ाया जा रहा है, जेलों की सलाखों के पीछे डाला जा रहा है, बावजूद इसके, रेपिस्ट बेखौफ़ होकर इस कुकृत्य को अंजाम दे रहे हैं.

उसने कभी इसे व्यथा-कथा को लेकर चंद लाईनें लिखी थीं, याद हो आयीं-" सड़कों पर परिरंभन हो और चौराहों पर हो चीर हरण, शैशव के तेरे ये दिन है तो भरी जवानी में क्या होगा?. यह सच है कि देश अभी-अभी अपना शैशवकाल छॊड़ कर जवानी में कदम रखने जा रहा है. अभी पूरा जवान भी नहीं हुआ है. यदि शैशल काल में ही ऎसे बुरे खौफ़नाक मंजर देखने पड़ रहे हैं, तो उस समय क्या होगा जब वह पूरा जवान हो उठेगा?".

दिल और दीमाक में उठा चक्रवात अब धीरे-धीरे शांत होने लगा था. सोचने-समझने की बुद्धि वापिस लौट आयी थी. अब वह अपने आपको एकदम तरोताजा सा महसूस करने लगा था. बिस्तर से उठकर वह कमरे की उस खिड़की पर जा खड़ा हुआ जो पूरब की तरफ़ खुलती थी. उसने उगले हुए सूरज को प्रणाम किया और मन ही मन निर्णय लिया कि वह किसी अज्ञात डर के चलते पलायन नहीं करेगा और पुलिस स्टेशन जाकर इस घटना की जानकारी देगा और रिपोर्ट दर्ज कराएगा. निर्णय लेने के साथ ही वह अपने कमरे के बाहर निकला. उसके साथी अब भी खुर्राटे भरते हुए गहरी नींद के आगोश में सो रहे थे.

अब उसके कदम तेजी से पुलिस स्टेशन की ओर बढ़ चले थे.

---

(१०)



भेड़िया.

“तड़ाक”

उसने एक जोरदार तमाचा उसके गाल पर जड़ दिया था.

तमाचा जड़ने के साथ ही उसका पूरा शरीर क्रोध में कांप रहा था. आँखों में अंगारे दहक रहे थे. उसकी आवाज में बिजली-सी कौंध रही थी. वह किसी भेड़िए की तरह गुर्रा रहा था. अपनी कर्कश आवाज में वह लगातार चीख-चिल्ला रहा था- “कहाँ है मेरा शेरु.... उसे तुम्हारे हवाले किया था और कहा था कि उसका ध्यान रखना, उसे समय पर खाना खिलाना...पानी पिलाना और उसे बागीचे में टहला लाना. बोलो कहा था न !, तुम इतना सा भी काम नहीं कर सकीं? आखिर तुम करती क्या हो बैठे-बैठे... मलाईदार माल खा-खाकर मुटिया रही हो. बताओ...कहाँ है मेरा शेरु....और न बतला पाई तो........?

वह “तो” पर आकर अटक गया था. अटक गई थी उसकी जुबान. वह क्या कुछ नहीं कर सकता है ? कल्पना मात्र से उसके शरीर में कंपकंपी सी होने लगी थी. वह जानती है कि वह नीचता की सारी हदें पार कर सकता है, वह आदमी से हैवान हो सकता है... उसकी दुर्गति कर सकता है. आए दिन वह अपनी नीचता पर उतर आता है और उसकी इतनी जमकर पिटाई कर देता है कि लाख दवा लगाने और सिंकाई करने के बाद भी जिस्म से दर्द नहीं जा पाता.

“ जी.....मुझे नहीं पता...वह अचानक कहाँ चला गया. खूब ढूंढने की कोशिश की..लेकिन उसे ढूंढ नहीं पायी”

" बकवास करती है साली..हरामी....अगर वह नहीं मिला तो समझ लेना.....मुझसे बुरा और कोई नहीं होगा". कहते हुए वह भारी कदमों से चलता हुआ शीघ्रता से बाहर निकल गया.

वह किसी कटे हुए वृक्ष की तरह बिस्तर पर गिर पड़ी और देर तक आंसू बहाती रही थी. देर तक रोते रहने के बाद वह उठ बैठी और वाशरुम में धंस गई और दीवार पर टंगे आईने में अपना चेहरा देखने लगी. रो-रोकर उसकी आँखें सूज आयी थीं. एक हसीन चेहरे पर विकृति की परछाईयां साफ़-साफ़ देखी जा सकती थी. गाल पर अब भी पाँचों उंगलियों के निशान मौजूद थे. उसने नल खोला. शीतल जल के छींटे चेहरे पर डाले. दहकते हुए गालों पर शीतल जल की बूंदों के पड़ते ही उसे राहत सी मिलने लगी थी. वह देर तक ऎसा करती रही.

वाशरुम से निकलकर वह एक सोफ़े में धंस गई. एक विशाल कक्ष में वह थी और उसकी तनहाईयाँ थी. सफ़ेद हंस की तरह उजले बीते दिनों की याद आती, तो उसकी आंखे मुस्कुरा उठती. और वर्तमान में बीत रहे कष्टदायी दिनों की याद करते ही, उसकी आंखों से पुनः गरमा-गरम आंसू टप-टपाकर झरने लगते. देर तक अनमनी सी बैठी रहने के बाद वह उठ खड़ी हुई और छत पर निकल आयी.

शीतल पवन के झंकोरों ने उसे अपने में आलिंगनबद्ध कर लिया. सुखद शीतल हवा के झोंकों में झूलते हुए उसे अच्छा लगने लगा था. दिन भर का थका-हारा सूरज, पहाड़ी के उस पार उतरकर अपने घर जाने की तैयारी में था. शाम को छत पर बैठी कांता सूरज को अस्ताचल में जाता देखती रही थी. ललछौंही किरणों से पीपल के पत्ते संवलाने लगे थे. पक्षियों के दल लौटने लगे थे. वे अपने मुँह में दाना-चुग्गा भर लाई थे, अपने शिशुओं के लिए. दाना-चुगा खिला देने के बाद वे आपस में बतियाने लगे. दूर-दूर तक उड़ कर जाते, फ़िर वापस लौट आते. शायद वे अपना कौशल दिखा रहे थे. सारे पक्षी उसकी बिदाई में सांध्य गीत गा रहे थे. बूढ़े पीपल के देह में झुरझुरी सी भर आयी थी. वह भी तालियाँ बजा-बजाकर पक्षियों का उत्साहवर्धन कर रहा था..

सूरज अपनी अंतिम किरणों का जाल समेटे पहाड के पीछे छिप गया और आसमान में हल्का-सुरमई अंधियारा घिरने लगा, जो क्रमशः धीरे-धीरे गहराता जा रहा था. अपने से बेखबर कांता दीवार से पीठ टिकाए प्रकृति के नित-नूतन बदलते रुप को देख रही थी. पंछियों का सामुहिक गान और अपने बच्चों के प्रति उमड़ आए स्नेह को देखते ही उसे अपनी दोनों बेटियों प्रभा एवं प्रिती और एकलौते पुत्र अभिजीत की याद हो आई. कहने को तो वे उसके पुत्र और पुत्रियां हैं, लेकिन समय की प्रचण्ड गति से चलती आधुनिक हवा उन्हें दूर उड़ा ले गई है. प्रभा अपने बाय-फ़्रेण्ड के साथ डेटिंग पर चली गई है, बिना बतलाए और सूचना दिए. प्रिती का कुछ अता-पता नहीं है, शायद वह भी अपने किसी आशिक के साथ रंग-रेलियां मनाने निकल गई हो और अभिजीत अमेरिका की सड़कों पर गटरमस्ती कर रहा होगा. इन तीनों में से कोई उसके पास होता तो वह उसके कांधे पर सिर टिकाकर रो तो सकती थी...अपना जी हल्का तो कर सकती थी. लेकिन समय की प्रचण्ड आंधी ने उसका सब कुछ उजाड़ दिया था. अब करे भी तो क्या करे कांता....किसे सुनाए अपने दिल

का दुखड़ा...किसे दिखाए अपने तन पर लगे जख्मों को....? किसे बतलाए कि राजेश अब पहले जैसा नहीं रह गया है... और बच्चे उससे छिटककर दूर जा चुके है और वह निहायत अकेली नारकीय जिन्दगी जी रही है. रेत पर पड़ी मछली की तरह छटपटाती कांता अपने अतीत के गलियारों में उतरकर चक्कर काटने लगी. यादों के पखेरु कभी पकड़ाई में आते तो कभी हाथ आते-आते फ़ुर्र से उड़ जाते.

बहुत खुश थी कांता अपनी छोटी सी दुनिया में. एक पतली सी तंग गली में उसका अपना छोटा सा आशियाना था. वह थी, तीनों बच्चे थे और संग था राजेश, जो उसके सपनों की दुनिया को नए-नए रंगों से रंगीन बनाता था, उसे हंसाता, खुद हंसता, गुदगुदाता और रोम-रोम में तरुणाई जगा जाता था. जीवन के कठोर रास्ते पर चलने के पहले उसने इसी तरह का सपना पाल रखा था कि उसका अपना एक छोटा सा आशियाना होगा, प्यारे-प्यारे बच्चे होंगे और होगा एक प्यारा सा राजकुमार,जो उसे अपनी बाहों के हिंडोलों में झुलाता रहेगा.

उसके सारे सपने हकीकत में बदलने लगे थे. उसे राजेश जैसा आदर्श पति जो मिल गया था. उसे पाकर वह निहाल हो गई थी. राजेश जंगल विभाग में स्टेनों के पद पर कार्यरत था. एक सीमित आय थी उसकी. बावजूद इसके उसकी घर-गिरस्थी बड़े आराम से चल रही थी. उसके जीवन में वह क्षण भी आ उपस्थित हुआ, जब वह मां बनने जा रही थी. शीघ्र ही वह एक बेटी की मां बन गई. राजेश के अनुपस्थिति में उसका सारा समय प्रभा के देखरेख और साज-संभार में निकल जाता. फ़िर आई दूसरी बेटी प्रिती. जैसा नाम वैसे ही सीरत-सूरत. अपनी प्यारी-प्यारी बेटियों के संग वह जी भर के बतियाती, उन्हें संस्कारित करती और समय-समय पर नेक सीख देना नहीं भूलती. दो-दो बेटियों के होने के बावजूद उसे लगता कि एक पुत्र और हो जाए, तो वह निहाल हो उठेगी. सपना सच हुआ और अभिजात का उसके जीवन में पदार्पण हुआ. इस तरह बहुत खुश थी कांता अपनी इस छोटी सी गिरस्थी में.

राजेश भी व्यस्त रहता अपने कार्यालयीन कामों में. वह हर काम चुटकी बजाते हल कर ले आता. दिन भर का थका-मांदा होने के बावजूद भी उसके चेहरे पर हंसी खेलती रहती. कार्यालय के सभी अधिकारी, यहाँ तक की स्टाफ़ का हर छोटा-बड़ा कर्मचारी उसके व्यवहार से खुश रहता था. यही सब कारण था कि वह सबका चहेता बना हुआ था. शाम के ठीक छः बजे वह अपना केबिन बंद कर सीधे घर चला आता. कांता और बच्चों के संग हो लेता. बेहद-बेहद खुश थी कांता अपनी छोटी से दुनिया में, जिसमें कई-कई इंद्र्धनुष एक साथ ऊग आए थे. कभी वह एक रंग से खेलती, तो कभी दूसरे से, कभी तीसरे से.

राजेश का भाग्य करवटें ले रहा था. वह अचानक एक ऎसी तिलिस्मी दुनिया में प्रवेश करने जा रहा था जिसकी कि उसने कल्पना तक नहीं की थी. उसके इलाके के आदिवासी नेता के देहावसान के बाद विधायक का पद खाली था. उस स्थान की भरपाई के लिए एक ऎसे योग्य और होनहार व्यक्ति की तलाश थी, जो पढ़ा-लिखा होने के साथ-साथ वाकपटु हो, मिलनसार हो, विनम्र हो और हर छोटी-बड़ी समस्याओं को चुटकी बजाते हल कर लेने वाला हो. प्रदेश के सांसद महोदय भी ऎसे व्यक्ति की तलाश में थे.

एक दिन. जंगल विभाग के बड़े आला अधिकारियों सहित, प्रदेश के सांसद और वन मंत्री वार्षिक अधिवेशन में भाग ले रहे थे. बातों ही बातों में कन्जर्वेटर साहब ने अपने कार्यालय में कार्य कर रहे राजेश के बारे में विस्तार से सांसद महोदय को बतलाते हुए कहा कि उन्होंने अब तक उस जैसा कर्मठ कर्मचारी नहीं देखा है. यदि उससे त्याग-पत्र लेकर विधायक के पद पर चुनाव लड़वा दिया जाए तो आपको एक बेहतर कैंडिडेट मिल सकता है. आफ़ीसर की बातों में दम था और उन्हें एक लंबे समय से ऎसे योग्य उम्मीदवार की तलाश भी थी.

सांसद महोदय ने उसे अपने कार्यालय में बुलवाकर अपना मंतव्य सुनाया. सुनते ही राजेश सकते में आ गया था. उसने सपने में भी नहीं सोचा था कि एक दिन वह विधायक भी बन सकता है. सुनते ही उसके शरीर में रोमांच हो आया था. खुशी के मारे वह अन्दर ही अन्दर उछलने लगा था. मन गदगद हो उठा था. चाहतें पंख पसार कर उड़ने लगी थीं पूरे वेग से. उसे इसी क्षण निर्णय लेना था. हां कहने मात्र से वह फ़र्श से अर्श तक जा सकता था और ना कहने पर उसे बाबू का बाबू ही बने रहना था. काफ़ी सोचने और विचार करने के बाद उसने हामी भर दी थी.

आज वह विधायक ही नहीं अपितु एक खास विभाग का मंत्री भी बन गया था. बाबू से मंत्री बना राजेश अपने भाग्य पर इतराने लगा था. जिसके पास कभी दो लोग इकठ्ठा नहीं होते थे, आज उसके इर्द-गिर्द भीड़ जमी रहती है. फ़टीचर सायकिल में चलने वाले राजेश के पास उसकी अपनी बेशकीमती फ़ोरव्हील गाड़ी है. अब वह टपरेनुमा कमरे में नहीं रहता. आज उसके पास एक आलीशान बंगला है और नौकर-चाकरों की भीड़. जब वह सफ़र में होता है तो पांच-दस गाड़ियां उसके आगे-पीछे चलती है. उसका अपना बाडिगार्ड है. आज क्या नहीं है राजेश के पास? धन-दौलत, रुतबा, पैसे-धेले, नौकर-चाकर. किसी चीज की कमी नहीं है उसके पास. सफ़लता के नशे में मदहोश रहने लगा था वह.

बहुत खुश थी कांता भी. उसने कभी अनुमान तक नहीं लगाया था कि वह आम से खास बन जाएगी. आम से खास बनी कांता नित नूतन सपने देखती और राजेश उन सपनों में रंग भर देता. टपरा टाईप स्कूल में पढ़ने वाली उसकी बेटियां और बेटे अब शहर के नामी-गिरामी स्कूल में पढ़ने जाते है. सभी के पास अपने-अपने व्हिकल हैं. सबके अपने रौब हैं, रुतबें हैं.

समय कभी एक सी चाल में नहीं चलता. वह सीधी चाल में चलता हुआ कब उलटी चाल में चलने लगेगा, कोई नहीं जानता. एक मनहूस क्षण, बिल्ली की सी दबी चाल में चलता हुआ कांता के घर में कब घुस आया, पता ही नहीं चल पाया. छोटी-बड़ी खुशियों के तिनकों को जोड़कर बनाया घोंसला अब बिल्ली की उछाल में जमीन पर आ गिरा था और घोंसलें में सिर छिपाए खुशियों के पखेरु, चिंचियाते हुए फ़ुर्र से दूर जा उड़े थे.

एक दिन की बात है. राजेश अपने दल-बल के साथ एक बिहड़ में से गुजर रहा था. तभी उसकी नजर एक कुतिया पर पड़ी जो आराम से सो रही थी और उसका नन्हा पिल्ला दूध चूस रहा था. गाड़ी की

आवाज सुनकर कुतिया उठ खडी हुई और जंगल में समा गई. राजेश के इशारे पर गाड़ी रोक दी गई. नवजात शिशु भाग नहीं पाया. राजेश ने उस पिल्ले को गौर से देखा. उस पिल्ले को देखते ही उसके मन में दया आ गई. पिल्ला था भी बड़ा सुन्दर. चमकीला रंग, भूरी-भूरी आंखें और जबड़े से झांकते नुकिले दांत. उसके मन में आया कि इसे अपने बंगले पर होना चाहिए. इसके रहते उसका घर सुरक्षित रहेगा, ऎसा विचार करते हुए उसने उसे अपने साथ ले आया.

राजेश के पी.ए. ने बतलाया कि वह कुतिया का बच्चा नहीं बल्कि भेडिया का बच्चा है. लेकिन राजेश ने उसके तर्क को बोथरा करते हुए, यह मानने से इनकार कर दिया कि वह भेड़िया का वशंज है.

घर में प्रवेश करते हुए उसने कांता को बुला भेजा और हिदायत देते हुए कहा कि वह इस नवजात पिल्ले का विशेष ध्यान रखेगी. उसे समय पर दूध पिलवाया करेगी और उसका समूचित रख-रखाव भी करती रहेगी. कांता ने उस पिल्ले को गौर से देखा. लम्बा मुँह, झब्बेदार पूँछ, आँखों से टपकती चालाकी. देखते ही समझ गई कि वह कुतिया का नहीं बल्कि भेड़िया का बच्चा है. उसने अपनी ओर से राजेश को समझाने की बहुतेरी कोशिश की कि जैसा वह समझ रहा हैं, वैसा नहीं है. उसने सलाह देते हुए कहा भी कि उस पिल्ले को फ़िर से जंगल में छुड़वा देना चाहिए. राजेश किसी भी तरह उसके तर्कों से सहमत नहीं था. उसका एक ही कहना था कि वह कुतिया का पिल्ला है, अतः उसे वह किसी भी कीमत पर अपने बंगले पर ही रखेगा.

दिन के शुरुआत भी बड़ी अजीब तरीके से होती. दिन निकलते ही उसके चमचों की भीड़ बंगले पर जमा हो जाती. चाय-पानी-नाश्ते के बाद वह अपने क्षेत्र के दौरे पर निकल जाता. वह घर कब लौटेगा, कोई नहीं जानता. कभी रात के दस, तो कभी बारह बजे वह घर लौटता. उसके लौटने का वह बेसब्री से इन्तजार करती रहती. इन्तजार करते-करते कभी-कभार उसकी आंख लग जाती, तो वह तूफ़ान उठा लेता और अर्र-सर्र बकने लगता. उसकी बहकी-बहकी चाल देखकर वह समझ जाती कि श्रीमान महुआ चढ़ाकर घर लौटे हैं. शराब और कबाब से दूर रहने वाला उसका राजेश अब पूरी तरह बदल गया था. एक दिन वह भी था जब वह आफ़िस से थका-हारा घर लौटता था. थका-मांदा होने के बावजूद वह उसे अपनी बाहों के घेरों में कस लेता और जी भर के प्यार-दुलार दिया करता था. लेकिन अब ऎसा नहीं होता. प्यार के दो शब्दों की जगह अब घिनौनी गालियों ने ले ली थी. वह समझ नहीं पा रही थी कि इस बदलाव का क्या कारण है?

. पिल्ला अब धीरे-धीरे बड़ा हो रहा था. जैसे-जैसे वह बढ़ता गया, उसकी खुराक भी बढ़ती चली गई. उसे अब दिन में दो बार मीट खिलाया जाता. मीट खा-खाकर वह मुटियाने लगा था. उसके शरीर का भूरा-काला रंग और चटख हो आया था. पूंछ और झबरीली घनी हो गई थी. उसके नूकुले दातों को देखकर भय लगता. कूं..कां करने वाला युवा होता पिल्ला अब गुर्राने लगा था. उसके गले से निकलने वाली आवाज भी दिल को दहला देने के लिए काफ़ी थी. लेकिन इन सब बातों से बेफ़िकर राजेश उससे चिपका रहता. ऎसा करते देख उसे घिन होने लगती. वह समझाने की कोशिश करती लेकिन राजेश की घूरती आंखों को देखकर वह सहमी रह जाती. शब्द गले में अटके रह जाते.

राजेश के इस बदले रूप को देखकर वह सहम जाती. वह समझ रही थी कि इस तरह का बदलाव अचानक नहीं आया है. यह बदलाव उस भेड़िए के आने के बाद से ही शुरु हुआ है. नशे में चूर राजेश भेड़िए के साथ खेलता, खुद मीट खाता और उसे भी खिलाता जाता. खेल-खेल में उसका झूठा खाना भी खा लेता. ऎसा करते हुए देखकर उसे घिन आने लगती. लेकिन वह कर भी क्या सकती थी, सिवाय देखते रहने के. राजेश के व्यव्हार में आए परिवर्तन की वजह वह पूरी तरह समझ चुकी थी कि नार्मल रहते हुए वह अचानक क्यों भड़क उठता है, उसकी आवाज में कर्कशपन क्यों उतर आता है, उसके लक्षणॊं को देखकर निश्चित रुप से कहा जा सकता है कि राजेश के शरीर में भेड़िए का प्रवेश हो चुका है, तभी तो वह इतना आक्रमक हो उठता है.

सुबह से ही घर में काफ़ी चहल-पहल थी. शायद कहीं टूर पर जाने का प्रोग्राम बन चुका था. राजेश के चमचों की उपस्थिति देखकर तो यही कहा जा सकता था. बाद में पता चला कि उसे मुख्यमंत्रीजी का बुलावा आया है और वह दो-चार दिन के लिए शहर से बाहर रहेगा. सारी तामझाम के बाद उसका काफ़िला रवाना हुआ. जाने से पहले उसने कांता के कमरे में प्रवेश करते हुए कहा कि वह दो-चार दिन के लिए बाहर जा रहा है. उसकी अनुपस्थिति में शेरु का ध्यान रखना. उसको समय पर खिलाया-पिलाया करना. उसके रख-रखाव में किसी भी प्रकार की कमी नहीं रहनी चाहिए.

कांता के मन में आया कि पलटकर जवाब देना चाहिए और यह पूछना चाहिए कि एक हिंसक पशु की इतनी ज्यादा चिंता करने के बजाय उसे अपने बेटा-बेटी की भी तो सुध लेनी चाहिए. उसे इस बात की तनिक भी चिंता नहीं है कि वे कहां है और कब घर लौटेगें? लेकिन नहीं, केवल उसे तो सिर्फ़ फ़िक्र है बस शेरु की. मन में उमड़ते-घुमड़ते सवाल होंठों तक आकर रुक जाते. वह हिम्मत नहीं जुटा पायी थी कि पलटकर जवाब दे दे. इससे पहले भी उसने इस बात का जिक्र किया था तो उसने टका सा जवाब देते हुए कहा था कि बेचारे अभी बच्चे हैं, उम्र के कच्चे हैं. यही तो दिन है उनके खाने-खेलने के. एक मंत्री के बेटा-बेटी को किस तरह से रहना..घूमना..फ़िरना चाहिए, तुम देहाती औरत क्या समझोगी. आ जाएंगे,जहां भी गए होंगे, तुम्हें चिन्तित होने की आवश्यकता नहीं है. उसकी सपाटबयानी सुनकर हक्का-बक्का रह गई थी वह. चुप रहने के अलावा और कर भी क्या सकती थी बेचारी. एक आंधी सी गुजरने लगी थी उसके भीतर.

शेरु के लिए एक आदमी अलग से तैनात कर रखा था राजेश ने. वह ही उसे नहलाता-धुलाता, खिलाता-पिलाता और घुमाने ले जाता. घुट्टा शेरु कभी बकरी पर हमला कर देता तो कभी मुर्गियों के बाड़े में घुस कर दो-चार मुर्गियां चट कर जाता. उसकी इस हरकतों से परेशान होकर उसके गले में एक मोटी सी जंजीर बांध दी गई थी. जीभ लपलपता शेरु जब दड़बे से बाहर लाया जाता, तो संभाले नहीं संभलता था. वह उसे खींचकर संभालने की कोशिश करता, लेकिन शेरु उसे घसीटता हुआ दूर तक चला जाता था. कई बार तो ऎसा भी हुआ है कि उसने जंजीर तोड़कर भाग जाने की कोशिश भी की थी.

एक सुबह. शेरु के अटैण्डेंट ने उसे बाहर घुमाने के लिए दड़बे के बाहर निकाला. गुर्राहट के साथ, जीभ लपलपाता शेरु जैसे ही दरवाजे की चौखट से बाहर निकला, पूरी ताकत के साथ उसने चेन छुड़ा ली और जंगल की ओर भाग खड़ा हुआ. अटैण्डेंट चिल्लाता रहा, उसे पुकारता रहा लेकिन उसने पलट कर नहीं देखा. जब शेरु उसकी पकड़ से बाहर हो गया तो उसने कांता से अपना दुखड़ा रोते हुए उसके भाग जाने की सूचना दी. कांता जानती थी कि राजेश लौटने के बाद पहले शेरु के बारे में ही पूछताछ करेगा. जब उसे यह सुनने को मिलेगा कि उसका प्रिय पात्र शेरु भाग गया है, तो उस पर कितना जुल्म ढाया जाएगा, जिसकी कल्पना मात्र से उसके शरीर में सिहरन होने लगी थी. दिल बैठने लगा था. उसने अटैण्डेंट को आज्ञा दी कि वह उसकी खोजबीन में तत्काल निकल जाए.

दो दिन की खोज-खबर के बाद भी शेरु पकड़ा नहीं गया था. राजेश घर लौट रहा है, इस बात की खबर उसे मिल गई थी. यदि इस बीच शेरु पकड़ा नहीं गया तो वह क्या जवाब देगी? इस चिंता में उसका दिल बैठा जा रहा था. उसने अपने नौकरों को आज्ञा दी के वे अपने साथ जाल साथ लेकर जायें. साथ ही उसने सक्त हिदायत भी दी कि उसे हर हाल में पकड़कर ले आना है.

बाहर गेट पर हो-हल्ला सुनकर वह बाहर निकली. उसने देखा. रस्सी के जाल में बंधा शेरु, जिसे एक लठ्ठ के सहारे दो आदमी टांगकर अन्दर आ रहे है और उनके पीछे पच्चीसों लोगों की भीड़ भी चली आ रही है. शेरु मिल गया, यह जानकर उसने राहत की सांस ली. लेकिन अटैण्डेंट को देखते ही सारा माजरा उसकी समझ में आ गया कि शेरु ने उस पर भयानक तरीके से हमला किया होगा जिससे उसके कपड़े जगह-जगह से फ़टे हुए थे और खून रिसकर उसके पूरे कपड़ों में फ़ैल रहा था. वह बुरी तरह से जख्मी हो गया था और थर-थर कांप भी रहा था. उसे तत्काल मेडिकल ऎड दिए जाने की जरुरत है. अगर समय पर ऎसा नहीं किया गया तो उस बेचारे की जान भी जा सकती है. उसने आगे बढ़कर मेडिकल कालेज के डाक्टर को फ़ोन किया और तत्काल एम्बुलेंस भेजने का अनुरोध किया.

जाल में फ़ंसा शेरु पूरी ताकत के साथ जोर लगाकर आजाद होना चाहता था. पूरी जोर अजमाईश के साथ वह बुरी-बुरी आवाज निकालते हुए जोरों से गुर्रा रहा था. कोई भी आदमी उसके पास जाने की हिम्मत नहीं जुटा पा रहा था. शायद कोई ऎसा कर पाता तो निश्चित ही वह उसके चीथड़े मचा देता.

कांता के मन में खलबली मची थी कि ऎसी विकट परिस्थिति में उसे क्या करना चाहिए?. एक मन हुआ कि इसे तत्काल गोली मार दी जानी चाहिए. यदि वह ऎसा कर सकी तो निश्चित ही एक भेड़िए से छुटकारा पाया जा सकता है, जो उसकी जान का दुश्मन बना बैठा है. परिणाम से भी वह वाकिफ़ थी कि इसका अन्जाम क्या हो सकता है. उसका मन घड़ी के पेण्डुलम की तरह दोलायमान हो रहा था. वह निर्णय नहीं ले पा रही थी कि उसे क्या करना चाहिए.

दोलायमान होते मन को उसने किसी तरह काबु में किया और निर्णय लिया कि शेरु के अभी तत्काल गोली मार देनी चाहिए.

निर्णय लेने के साथ ही उसने अपने कमरे में टंगी रिवाल्वर उठा लायी और धड़कते दिल से फ़ायर कर दिया. एक के बाद एक उसने तीन गोलियां उसके जिस्म में उतार दी. गोली लगने के साथ ही वह जाल सहित काफ़ी ऊपर तक उछला, जोरों से गुर्राया और निर्जीव होकर धरती पर आ गिरा.

उसके धरती पर गिरने के साथ ही राजेश ने प्रवेश किया. आंगन में जमा भीड़ देखकर सारा माजरा उसकी समझ में आ गया था कि उसका शेरु मारा गया है. कभी वह आंखें तरेर कर अपने मरे हुए शेरु को देखता तो कभी साक्षात दुर्गा बनी कांता को. देर तक घूरते रहने के बाद वह भारी कदमों से चलता हुआ बंगले में घुस गया.

कांता के मन में अपरिमेय संतोष उतर आया था कि उसने अपने जीवन को नरक बना देने वाले एक भेड़िए को तो मार गिराया है और अब उसे यह देखना है कि दूसरा भेड़िया उसके साथ किस तरह का व्यवहार करता है ?.

(११)

<u>लाल कमीज-बिल्ला नम्बर २४३</u>

“यात्रीगण कृपया ध्यान दें. निजामुद्दीन से चलकर हैदराबाद को जाने वाली दक्षिण एक्सप्रेस अपने निर्धारित समय से एक घण्टा विलम्ब से चल रही है..... यात्रीगण कृपया ध्यान दें”..... उद्घोषिका बार-बार इस सूचना को प्रसारित कर रही थी.

दक्षिण एक्सप्रेस ही क्या प्रायः सभी गाड़ियां कोहरे की वजह से विलम्ब से चल रही है. पूरा प्लेटफ़ार्म यात्रियों से खचाखच भरा हुआ है. हर कोई अपने आप में व्यस्त है. कोई मोबाईल पर चिटचैट करने में लगा है, तो कोई अपना सामान इधर से उधर जमाने में लगा है. कोई सीट पर कुण्डली मारे बैठा, अनमने मन से अखबार के पन्ने पलट रहा है, तो कोई किसी पत्रिका के. सामान बेचने वाले वैण्डर अपनी ठिलिया लेकर इधर से उधर चक्कर लगा रहे है. उन्हें उम्मीद है कि कोई न कोई सामान तो बिक ही जाएगा. चाय बेचने वाले भी कहाँ पीछे रहने वाले थे. वे भी अपनी केतली उठाए इधर से उधर डोल रहे थे. बड़े-बूढ़े अपने सामान की सुरक्षा में सतर्क बैठे थे, जबकि युवातुर्क कान में इअर-फ़ोन और आँखों पर सनग्लास चढ़ाए चढ़ाए, एक सिरे से चलते हुए दूर तक निकल जाते और फ़िर बड़ी शान से, धीरे-धीरे चलते हुए अपनी जगह पर वापिस लौट आते. सफ़ाई कर्मी मुस्तैदी के साथ प्लेटफ़ार्म की सफ़ाई में लगे हुए थे. सफ़ाई कर्मी, सफ़ाई करते हुए आगे निकलता कि दूसरा यात्री कोई न कोई अनुपयोगी वस्तु बिखेर देता. इन हरकतों को देख वह अपने दूसरे सफ़ाई कर्मी से शिकायत भरे शब्दों में कहता- “कब सुधरेंगे हमारे यहाँ के लोग? जगह-जगह डस्टबीन रखे हुए

हैं लेकिन उनमें कचरा न डालकर लोग फ़र्श पर बिखेर देते हैं. शर्म नाम की तो कोई चीज ही नहीं बची है. समझाओं, तो झगड़ा-फ़साद करने बैठ जाते हैं. कचरा पड़ा देखकर सुपरवाईजर अलग खरी-खोटी सुनाता है. अपने मन का गुबार निकाल कर फ़िर वह अपने काम में जुट गया था. लाल कुर्ता पहने कुली इस आशा को लिए इधर से उधर चक्कर काटते दीखते कि कोई न कोई काम तो मिल ही जाएगा. किसी को सीट चाहिए होती है, तो किसी के पास जरुरत से ज्यादा सामान होता है. उन्हें काम तो मिल जाता है लेकिन मोल-भाव को लेकर काफ़ी चिकचिक चलती है, तब जाकर कोई सौदा पटता है.

"यात्रीगण कृपया ध्यान दें....." उद्घोषिका का स्वर माइक पर गूंजता है. वह अभी पूरा वाक्य भी नहीं बोल पायी थी कि यात्रियों के कान सजग हो उठते है. मन में खदबदी सी मचने लगती है कि पता नहीं कौन सी ट्रेन आने वाली है. वाक्य पूरा हो इसके पहले पूरे प्लेटफ़ार्म पर पसरा कोलाहल थम सा जाता है. वाक्य पूरा होते ही यात्री अपने-अपने सामान समेटने लगता है. कौन सा डिब्बा कहाँ लगेगा, स्क्रीन पर दिखाया जाने लगता है. लोग इधर से उधर भाग-दौड़ लगाने लगते है. कुछ युवा तुर्क प्लेटफ़ार्म के एकदम किनारे पर खड़े होकर, आने वाली ट्रेन को देखने के लिए कभी इधर, तो कभी उधर देखते हैं. इनमें से कई तो ऎसे भी है, जिनको पता ही नहीं होता कि गाड़ी किस दिशा से आने वाली है.

गाड़ी धीरे-धीरे रेंगते हुए आकर ठहर जाती है. उतरने वाला यात्री उतर भी नहीं पाता कि चढ़ने वाले किसी तरह डिब्बे में प्रवेश कर जाना चाहते है. एक अघोषित मल्ल-युद्ध मचने लगता है इस समय. थोड़ी देर में माहौल शांत होने लगता है. ट्रेन अब अपनी जगह से चलने लगी है. कुछ मनचले लड़के दौड़कर डिब्बे में सवार होने के लिए रेस लगा रहे थे. ट्रेन ने अब स्पीड पकड़ ली थी. ट्रेन के गुजर जाने के बाद भी भीड़ में कमी नहीं हुई थी.

एक ट्रेन अभी गुजरी भी नहीं थी कि दूसरी आकर खड़ी हो गई. ट्रेन के आते ही भगदड़ मच गई. कोई इधर से दौड़ लगाता, कोई उधर से. उतरने वालों और सवार होने वाले पैसेंजरों के बीच तू..तू...मैं...मैं. मचने लगी. ट्रेन चुंकि सुपरफ़ास्ट थी, और उपर से विलम्ब से भी चल रही थी, फ़िर स्टापेज भी काफ़ी कम समय के लिए ही था. इसलिए ये सब तो होना ही था.

दो-ढाई घण्टे में चार-पांच ट्रेने आयीं और चली गई. किसी दूसरी ट्रेन के आने में अभी विलम्ब था. सब्जी-पूड़ी की ठिलिया लगाने वाले रामदीन ने बड़े इत्मिनान से माथे पर पर चू रहे पसीने को अपने गमझे से पोंछा और अब वह नोट गिनने का उपक्रम करने लगा था. इस बीच उसकी जमकर कमाई हुई थी. नोट गिन लेने के बाद उसने नोटों की गड्डी को अपनी पतलून के जेब में ठूंस कर भरा और लोगों की नजरें बचाते हुए उसने तम्बाखू की डिब्बी निकाली. जर्दा निकाला और चुने से मलते हुए अपने होंठो के नीचे दबा लिया.

काम की व्यस्तता के बावजूद उसकी नजरें कुली कल्लु पर जमी हुई थी. कई ट्रेनों के गुजर जाने के बावजूद भी वह रेलिंग से पीठ टिकाए बैठा था. अनमना सा. उदास सा. पल भर को भी अपनी जगह से

हिला तक नहीं था. सोच में पड़ गया था रामदीन कि जरुर कोई न कोई दुख साल रहा होगा उसे, वरना एक मस्त तबियत का आदमी, कभी इस तरह सूरत लटकाए बैठ सकता है?. उससे अब रहा नहीं गया.

“का बात है कल्लु भइया....काहे सूरत उतारे बैठे हो? जरुर कोई बात है, वरना तुम कभउ अएसन बैठे नाहीं दिखे. तबियत-वबियत तो ठीक है ना तुम्हारी ?” रामदीन ने उसका हाथ अपने हाथ में लेते हुए पूछा था. सहानुभूति में पगे दो शब्दों को सुनकर उसकी आँखे नम हो उठी थीं. किसी तरह छलछला आए आंसुओं को रोकते हुए उसने कहा-

“अइसी वइसी कोनु बात नई है रे......बस यूं ही..”

“जरुर, कोई न कोई बात तो है.... वरना तुम इस तरह उदासी ओढ़े कभी बैठे रहे हो भला?. खुश तबियत होती तो अब तक दो-तीन सौ तो कमा ही लेते. देखो भइया...तुम्हारा हमारा आज का साथ नहीं है. बरसों बरस से हम एक दूसरे को जानते हैं...एक दूसरे के दुख-सुख के साथी रहे हैं. न तो हमारी कोई बात तुमसे छिपी है और न ही तुम्हारी बात हमसे छिपी है. तुम्हारी हालत देखकर समझा जा सकता है कि तुम किसी बात को लेकर दुखी जरुर हो. कहते हैं कि अपना दुख उजागर कर देने से मन हलका हो जाता है....दुख आधा हो जाता है...बताओ तो आखिर का बात है?

“ आखिर बतलाए भी तो क्या बतलाए कल्लु कि उसका बेटा जो महानगर में एक बड़ा अफ़सर है, उसे अपने साथ शहर लिवा ले जाने के लिए तीन दिन से यहाँ डेरा डाले बैठा है. उसका अपना तर्क है कि कि मुझे अपना पुश्तैनी मकान और खेत-बाड़ी बेच-बाच कर उसके साथ रहना चाहिए. उसका तो यह भी कहना है कि उसे मेरे स्वास्थ्य आदि को लेकर गहरी चिंता बनी रहती है लेकिन लंबी दूरी रहने के कारण वह बार-बार नहीं आ सकता. साथ रहेंगे तो हमें बेफ़िक्री बनी रहेगी. फ़िर चिंटु भी तो आपकी खूब याद करता है. उसे आपका साथ मिल जाएगा. सच कहता है बेटा कि मुझे साथ चले जाना चाहिए. तभी उसे अपनी बहू अल्का की याद हो आयी...... याद हो आए वे कड़ुवे पल जब उसकी हरकतों को देखकर उसका दिल छलनी-छलनी हो गया था. उसे खून के आंसू बहाने पड़े थे. यदि लगातार का साथ बना रहा तो वह और भी नीच हरकतें कर सकती है. बेटे से शिकायत भी करेगा तो कितनी बार करेगा? जाहिर है कि उनके बीच अप्रत्याशित तकरारें बढ़ेगी और संभव है कि उनकी घर-गृहस्थी में दरार पड़ जाएगी..... घर नर्क बन जाएगा....वह ऎसा होता हुआ वह हरगिज नहीं देख सकेगा.....वह उन दोनों के बीच खलनायक नहीं बनना चाहेगा. अपने दुखों को मित्रों के बीच बांटना उचित नहीं है. ऎसा करने से उसकी जग हंसाई ही होगी और उनकी नजरों में बेटे की साख भी गिर जाएगी....नहीं...नहीं वह अपने दुखों की गठरी किसी पर नहीं खोलेगा”. वह कुछ और सोच पाता इसी बीच एनाउन्सर की आवाज गूंजने लगी थी, शायद किसी ट्रेन के आने का वक्त हो गया था. ट्रेन के आगमन की सूचना पाकर उठ खड़ा हुआ और अपनी ठिलिया सजाने लगा था.

रामदीन के जाते ही कल्लु फ़िर अपनी विचारों की दुनिया में वापिस लौट आया था. स्मृतियों के पन्ने फ़िर तेजी से फ़ड़फ़ड़ाने लगे थे और वह अतीत की गहराइयों में उतरकर डूब-चूभ होने लगा था.

उसके पोते का जन्म दिन था. फ़ोन पर चिंटू था. सबसे पहले उसने 'दादाजी पायलागु" कहा. सुनते ही उसके शरीर में रोमांच हो आया था. " दादा जी, परसों मेरा जन्म-दिन है. आपको आना पड़ेगा. आपके बगैर मुझे अच्छा नहीं लगेगा. मैंने पापा जी से कह दिया है कि अगर आप नहीं आओगे, तो मैं अपना जन्मदिन नहीं मनाउंगा. आज ही आप टिकिट कटवा लें. कल सुबह तक आप यहाँ पहुँच जाएंगे ". ना करने का तो कोई प्रश्न ही नहीं था. उसने हामी भर दी थी और रात की ट्रेन का रिजर्वेशन करवा लिया.

अपने पोते से मिलने को वह उतावला हुआ जा रहा था. कई दिनों से वह सोच भी रहा था कि एक बार उससे मिल आना चाहिए. लेकिन चाह कर भी वह नहीं जा सका था. जाने से पहले उसने अपने प्रिय पोते के लिए एक बड़ा सा खिलौना खरीदा. बनारसी की मिठाई की दुकान से एक किलो का डिब्बा पैक करवाया और जयराम की दुकान से अपने बेटे के लिए सूट का कपड़ा और बहूरानी के लिए साड़ी पैक करवायी.

ट्रेन अपने निर्धारित समय से दो घंटा विलम्ब से चल रही थी. ट्रेन को विलम्ब से चलता देख उसे खीझ होने लगी थी. मन में बेचैनी बढ़ने लगी थी. वह जल्द से जल्द शहर पहुंच जाना चाहता था, लेकिन मजबूरी थी. वह कर भी क्या सकता था ?. वैसे तो अपने जीवन में वह लेट चलने वाली ट्रेनों को देखता आया है. तब उसके मन में न तो किसी प्रकार का रोष पैदा हुआ था और न ही खीज पैदा हुई थी. ट्रेन के इन्तजार में बैठा वह सोचने लगा था कि काश यदि उसके पंख होते, तो बिना समय गवांए वह कभी का वहाँ जा पहुँचता.

आखिर इन्तजार की घड़ियां समाप्त हुई. ट्रेन छुक-छुक करती प्लेटफ़ार्म पर आकर ठहर गई थी. अपनी निर्धारित सीट पर बैठते हुए उसने अपने सूटकेस को चेन से कसा और ताला जड़ दिया. अब वह इत्मिनान से सफ़र कर सकता है.

खिड़की पर उसकी अपनी मित्र मंडली जमी हुई थी. एक कहता- "भैये..अब जमकर रहना बेटे के पास. हो सके तो वहीं रुक जाने का मन बना लेना. उसका वाक्य पूरा भी नहीं हो पाता तो दूसरे ने चहक कर कहा- हाँ..हाँ तुमने पते की बात की है. इन्हें अब बेटे के पास ही रहना चाहिए. बुढ़ाती देह को किसी न किसी का सहारा तो होना ही चाहिए न !. भाभी होती तो अड़ी समय में देखभाल करती. पता नहीं रात-बिरात क्या कुछ हो जाए ?. ईश्वर करे ,ऎसा न हो, लेकिन नियति का क्या ठिकाना, कब क्या घट जाए?. तीसरे ने कहा- तुम लोग ठीक सलाह दे रहे हो, पर भाई माने तब न. बेटा कितनी मिन्नते करता रहता है कि साथ रहना चाहिए. पर ये जिद पकड़े बैठे हैं कि यहीं ठीक हूँ. पता नहीं तीन कमरों के छोटे से मकान का मोह ही नहीं छूट पा रहा है इनका. अब चौथे की बारी थी-" इनकी जगह मैं होता न ! तो कभी का बेटे के पास चला जाता. अरे...हम अपने बेटा-बेटियों को पढ़ाते-लिखाते ही इसलिए हैं कि वे एक दिन बड़ा आदमी बने..एक अफ़सर बने और हम गर्व के साथ उनके बीच रहकर शेष जीवन काट सके. जितने मुंह उतनी बातें. वह गम्भीरता से सबकी बातें सुनता रहा था.

सिग्नल दिया जा चुका था. ट्रेन के छूटने का समय हो चला था. सबकी ओर मुखातिब होते हुए.वह केवल इतना ही कह पाया था-" आप सब लोगों ने उचित सलाह ही दी है. मुझे खुशी हुई आप लोगों की बात सुनकर. लेकिन मैं अब तक इस शहर को छोड़ने का मानस नहीं बना पाया. मन है कि मानता ही नहीं. अब तुम्हीं बताओ....बचपन से लेकर अब तक मैं इसी शहर में पला-बढ़ा. पूरा जीवन आप लोगों के बीच रह कर बिताया. आप लोगों के बीच रह कर सुख-दुख दोनों भोगे. मैं आप लोगों से इतना घुलमिल गया हूं कि दूर चले जाने की कल्पना मात्र से दिल में घबराहट होने लगती है. वह और कुछ कह पाता की ट्रेन चल निकली. अश्रुपुरित नेत्रों से वह सभी को हाथ हिला-हिलाकर अभिवादन करता रहा था, जब तक कि वे आंखों से ओझल नहीं हो गए थे.

पूरी रात वह चैन की नींद सो नहीं पाया था. अपने पोते के साथ बिताए दिनों की याद करते हुए उसके शरीर मे गुदगुदी होने लगी थी. कभी उसे घोड़ा बनना पड़ता था तो कभी चोर-सिपाही का खेल खेलते हुए उसे चोर बनना पड़ता. चिंटु हाथ में रस्सी का टुकड़ा लिए मानो वह हथकड़ी हो, उसकी तलाश करता. कभी उसे पलंग के नीचे तो कभी दरवाजे की ओट में खड़ा रहना पड़ता था. पकड़ा जाने पर पिंटु खूब शोर मचाता कि उसने एक मुलजिम को गिरफ़्तार कर लिया है. कभी घूमते हुए वे शहर के बाहर निकल जाते और ऊँची सी टेकड़ी पर बैठकर अपने घर की तलाश करते. दोनों के बीच होड़ लगती कि जो अपने घर को पहचान लेगा, इनाम में उसे सौ रुपये का एक नोट मिलेगा.

बेचारा चिंटु हार मान लेता. असंख्य मकानों के बीच अपना घर पहचान लेना, कोई आसान काम तो नहीं था उसके लिए. आखिर वह अपनी हार मान लेता और कहता-" दादा जी, हम हार गए. पापा से पैसे लेकर मैं आपको दे दूंगा. अब आप ही बतलाइये कि अपना मकान कौन सा है?. वह उंगली से इशारा करते हुए उसे अपना मकान दिखलाता. वह सब महज इसलिए भी इस खेल को खेल रहा था कि बड़ा होने पर उसे अपनेपन का अहसास तो बना रहेगा..... अपने घर के प्रति मोह तो बना रहेगा. वैसे वह जानता है कि पढ़-लिख कर कोई एक बार महानगर में पैर रख लेता है, वह दुबारा लौट कर घर नहीं आता. पिंटु ही की क्या, उसका अपना बेटा भी तो शहर का ही होकर रह गया है. वह शायद ही वापिस लौटे. जब वह लौट नहीं सकेगा तो इस नन्हें बालक से क्या उम्मीद की जा सकती है?.

पिंटु की बात सुनकर मन खुश हो जाता और वह उसे अपने सीने से चिपका लेता. उसे सीने से लगाते हुए उसके रोम-रोम में प्रसन्नता की लहरें हिलोरे लेने लगतीं. फ़िर वह उसके कहता-" पिंटु सौ रुपये उधार रहे. मुझे अभी इसकी आवश्यक्ता नहीं है. जब तुम बड़े होगे. लिख-पढ़कर जब तुम एक अफ़सर बनोगे ! तब लौटा देना" कहते हुए उसकी कोर भींग उठती. वह जानता है कि जब तक वह इस संसार में ही नहीं रहेगा.

पिंटु कभी किसी पेड़ की शाख पकड़कर झूलता तो कभी किसी रंग-बिरंगी तितली का पीछा करते हुए उसे पकड़ने के लिए दौड़ लगाता. सर्र-सर्र करती बहती हवा के झोंकों में उसे लगता कि वह भी किसी पखेरु

की तरह हवा में उड़ा जा रहा है. तरह-तरह के खेलों को खेलते हुए शाम घिर आती. सूरज के लाल-लाल बड़े से गोले की ओर उंगली उठाकर वह कहता-“ पिंटु सूरज देवता अब अपने घर जा रहे हैं. कल सुबह फ़िर वे एक नया सबेरा लेकर आएंगे. बस, थोड़ी ही देर में अन्धकार गहराने लगेगा. अब हमें इस पहाड़ी पर से उतर जाना चाहिए, वर्ना अंधकार में उतरने में परेशानी हो सकती है. मगन मन चिंटु हामी भरता और वे पहाड़ी उतरने लगते.

घर लौटने से पहले वह उसे चाकलेट-टाफ़ी वगैरह दिलवाता और इस तरह वे घर लौट आते.

हंसते-खेलते दिन पर दिन कैसे बीतते चले गए, पता ही नहीं चल पाया. अब उसे वापिस होना था. उसके स्कूल जो खुलने वाले थे. पिंटु के जाने के बाद से उसका दिल गहरी उदासी से भर गया था. न खाने-पीने में मन लगता और न ही उसे नींद आती थी. धीरे-धीरे सब सामान्य हो चला था. बीते दिनों को याद करते हुए वह खुश हो लेता. शायद ही कोई ऎसा दिन रहा होगा, जिस दिन पिंटु की ओर से फ़ोन न आया हो. फ़ोन की घंटी बजते ही वह लपक कर उठाता और देर तक उससे बातें करते रहता.

विचारों की श्रृंखला टूटने का नाम नहीं ले रही थीं. उसमें गहरे गोते लगाते हुए वह कब नींद की आगोश में चला गया, पता ही नहीं चल पाया. शोरगुल सुनकर उसकी नींद खुली. खिड़की से झांककर देखा. ट्रेन वीटी पर खड़ी थी और उतरने वालों की लंबी लाईन लगी थी. उसने जेब से चाभी निकाली. चेन से बंधे सूटकेस को खोला और अपनी सीट से उठ खड़ा हुआ. स्टेशन से बाहर निकलकर उसने टैक्सी ली और घर की ओर चल पड़ा. ट्रेन की लेट-लतीफ़ी की वजह से उसने बेटे को स्टेशन न आने की सलाह देते हुए कह दिया था कि वह सीधे घर पहुँच जाएगा.

दरवाजा अन्दर से बंद था. उसने काल-बेल का स्वीच दबाया और किसी के आने का इन्तजार करने लगा. दरवाजा खोलने वाला और कोई नहीं बल्कि उसका चहेता पिंटु ही था. उसे सामने पाकर उसने सूटकेस को एक तरफ़ रखते हुए उसे अपनी बाहों के घेरे में ले लिया. चिंटु से गले लगते हुए उसे अपार प्रसन्नता का अनुभव हो रहा था. घर के अन्दर प्रवेश करते ही चिंटु ने अपनी मम्मी को तेज आवाज लगाते हुए कहा-“ मम्मी..मम्मी....देखो तो सही.....मेरे प्यारे दादाजी आए हैं”.

सोफ़े में धंसते हुए दादा-पोते बतियाने लगे. बातें करते हुए उसे ध्यान ही नहीं आया कि चिंटु को तोहफ़ा देना तो वह भूल ही गया है. अपनी भूल को सुधारते हुए उसने एक बड़ा सा पैकेट देते हुए कहा-“ पिंटु..ये रहा भाई तुम्हारा तोहफ़ा...इसे खोलकर देखो तो सही कि दादाजी तुम्हारे लिए क्या लाए है?. पिंटु ने पैकेट हाथ में लेते हुए कहा..” दादाजी ..आपने जो भी लाया होगा, वह सुन्दर ही होगा...इसे कल सबके सामने खोलूंगा और अपने दोस्तों को बतलाउंगा”. कहते हुए उसने उसे एक ओर रख दिया था.

इसी बीच बहू ने आकर उसके चरण स्पर्ष किए. कुशल-क्षेम पूछा और यह कहकर वापस हो ली कि वह जल्दी ही नाश्ता और चाय-पानी लेकर आएगी.

चिंटु ने अपने पिता को दादाजी के आगमन की सूचना फ़ोन पर दे दी थी. " बेटे..मुझे आने में थोड़ा समय लग जाएगा. तब तक आप अपने दादाजी के साथ गप्प-सड़ाका लगाओ. हो सके तो उन्हें पार्क घुमा लाओ. आफ़िस से लौटते समय मैं पूजा प्लस होता हुआ आउंगा. मैनेजर ने पूरी व्यवस्था कर रखी है या नहीं...देखता आउंगा."

चाय-नाश्ते के बाद दोनों पार्क की ओर निकल गए. रास्ता चलते हुए उसने देखा कि कई बच्चे संकरी गली में क्रिकेट खेलने में निमग्न हैं. यह देखते हुए वह सोच में पड़ गया था उसका पोता भी इन्हें गलियों में अपने मित्रों के साथ खेलता होगा. महानगरों में इतनी जगह ही कहाँ बची है कि बच्चे खेल खेल सकें, जबकि उसके अपने छौटे से शहर में बड़े-बड़े खेल के मैदान है. लंबे-चौड़े पार्क भी हैं जहाँ वे अपना मनोरंजन कर सकते हैं.

देर रात बीते उसे अपने बेटे से मिलने का मौका मिला. सभी ने साथ बैठकर खाना खाया. यहाँ-वहाँ की बातों के बाद अब वे सोने चले गए थे, ताकि अगली सुबह बची-खुची तैयारियाँ की जा सके.

पूजा प्लस जाने से पहले बेटे ने दो बड़े से पैकेट अपने पिता को देते हुए कहा-" पापाजी...इसमें आपके लिए कुछ कपड़े हैं, मेरी इच्छा है कि आप इन्हें पहन लें. बस थोड़ी ही देर में हम सब यहाँ से निकल चलेंगे". पैकेट देकर वह लौटने ही वाला था कि कल्लु ने उसे रोकते हुए कहा.." जरा एक मिनट के लिए रुको तो सही...मैं इसे तुम्हारे ही सामने खोलना चाहूंगा".

"जी ..पापाजी..कहते हुए वह एक कुर्सी में धंस गया था.

कल्लु ने पैकेट खोला. उसमें एक बंद गले का कोट-पैंट और शर्ट थी. दूसरे पैकेट में चमचमाते जूते थे. कल्लु को यह सब देखकर आश्चर्य होने लगा था. उसने कहा;- " बेटे तू तो जानता है कि मेरी अपनी पहचान लाल कमीज और बिल्ला नम्बर २४३ की रही है. मैंने अपने पूरे जीवन में कभी भी कोट-पैंट नहीं पहने और न ही इस तरह के जूते. बजाए इसके, तुम मेरे लिए कुर्ता-पाजामा लाए होते तो अच्छा होता".

सुनकर वह सोच में पड़ गया था. बात सच भी थी. वह दुविधा में पड़ गया था. और सोचने लगा था कि बर्थ-डे पार्टी में चिंटु उनका साथ नहीं छोड़ेगा. अगर वे मामूली कपड़ों में होंगे, तो आने वाले अफ़सर उन्हें हिकारत भरी नजरों से देखेंगे...अगर ऎसा हुआ तो वह सहन नहीं कर पाएगा और पार्टी का मजा किराकिरा हो जाएगा. यही सोचकर उसने उनके नाप का सूट और जूते ले आया था. पुराने जमाने के अपने पिता को वह कैसे और क्या कहकर मनाए, समझ में नहीं आ रहा था. तभी उसके मन में एक आइडिया आया कि चिंटु का हवाला देते हुए उन्हें मनाया जा सकता है. अगर पिंटु एक बार उनसे कह दे तो वे इनकार नहीं कर पाएंगे.

" पापाजी...मैं आपकी भावनाओं को समझ सकता हूँ लेकिन चिंटु को भला कौन समझाए. जिद कर बैठा कि मेरे ददुदु के लिए सूट ही खरीदना है. वे मेरी पसंद का सूट अवश्य पहनेंगे. अब आप जाने और

आपका लाड़ला चिटु". मुझे बीच में मत डालिए". कहते हुए उसने याचना भरी नजरों से देखा. होशियार था चिंटु. समझ गया कि अब उसे क्या करना और कहना चाहिए.

"दादाजी....आपको सूट पहनना ही पड़ेगा. मैंने इन्हें आपके लिए ही पसंद किया है. अब उठिए और जल्दी से तैयार हो जाइए". चिटु की बात सुनकर उसका ह्रदय भर आया था और नेत्रों से आंसू झरझराकर बह निकाले थे. कहते हैं न कि मूल से सूद ज्यादा प्यारा होता है. बड़े-बूढ़े एक बार भले ही अपनी सगी औलाद की बात सुनी-अनसुनी कर दें, लेकिन अपने पोते की बात को किसी भी कीमत पर टाल सकने की स्थिति में नहीं रहते.

ना-नुकुर करने की स्थिति में नहीं था कल्लु. उसे हर हाल में अपने पोते की बात माननी ही पड़ेगी.

कपड़े पहन कर वह आईने के सामने जा खड़ा हुआ. अपने बदले हुए अंदाज देखकर वह खुद पर भरोसा नहीं कर पा रहा था कि क्या यह वही कल्लु कुली है जिसकी देह पर चौबीसों घंटे लाल शर्ट और कमर में पाजामा बंधा रहता है. वह कुछ और सोच पाता कि बहू ने कमरे में प्रवेश करते हुए उसे सोने की चेन देते हुए कहा. ."बाबूजी..इसे जरुर पहन लेना". इतना कहकर वह वापिस हो ली थी.

पूजा प्लस को दुल्हन की तरह सजाया गया था. बेटा और बहू अपने मित्रों का मुस्कुराते हुए स्वागत करने में निमग्न थे. वह अपने पोते के साथ बैठा उस घड़ी का इन्तजार कर रहा था, जब उसके माथे पर तिलक-रोली लगायी जाएगी. फ़िर वह केक काटेगा और इसी के साथ जश्न शुरु हो जाएगा.

झिलमिल रोशनी के बीच आर्केस्टा वाले फ़िल्मी गीत गा रहे थे. डांसिग फ़्लोर पर कुछ बच्चे नाच-गा रहे थे. पूरा हाल मेहमानों से खचाखच भरा था. सभी को उस घड़ी का इन्तजार था, जब चिंटु मंचासीन होकर केक काटेगा. तभी बेटे ने मंच से मुखातिब होते हुए सभी को उस स्थान पर आने के लिए आमंत्रित किया, जहाँ केक काटने की व्यवस्था की गई थी.

चिंटु इस वक्त किसी हीरो से कम नहीं लग रहा था. सबकी नजरें उस पर टिकी थी. बहू ने आगे बढ़कर मोमबत्तियां सुलगाई. चिंटु ने केक काटा और जलती हुई मोमबत्तियों को एक फ़ूंक में बुझा दिया. पूरा हाल तालियों की गूंज़ और हेप्पी बर्थडे टू चिंटू की शोर में नहा गया. जलती मोमबत्तियों को बुझाता देख वह ऎसा करने से मना करने वाला ही था, लेकिन यह सोचते हुए चुप्पी साध गया कि उसे जाहिल-गवांर समझा जाएगा. यदि ऎसा हुआ तो बेटे की किरकिरी हो जाएगी. लोग उसके बारे में पता नहीं कैसी-कैसी धारणाएं बना लेंगे. वह गंभीरता से सोचने लगा था कि हमारी संस्कृति में दीप जलाकर, अन्धकार को दूर करने की परम्परा रही है. क्या सारे हिन्दुस्थानी अपनी पुरातन संस्कृति को..अपनी पावन परम्परा को भूल गए है ?. हमारे यहाँ जलते हुए दीपक को कभी बुझाया नहीं जाता है. ऎसा करना अपशगुन माना जाता है, लेकिन यहाँ क्या, सभी जगह उलटी रीत जो चल निकली है.

केक कटने के साथ ही लोग उसे तोहफ़े देने लगे थे. चिंटु लेता जाता. मुस्कुरा कर उनका अभिवादन करता. थैंक्स कहता और दादाजी को देता जाता. वह भी उन्हें यथास्थान रखता जाता. अब कुछ युवा तुर्क डांसिंग फ़्लोर की ओर बढ़ चले थे. किसी इंग्लिश फ़िल्म का गाना बज रहा था. कुछ युवक-युवतियां एक-दूसरे की कमर में हाथ डाले थिरक रहे थे. कुछ स्वादिष्ट भोजन का आनन्द ले रहे थे. बड़े-बूढ़े भी भला पीछे कैसे रहते. वे भी अपनी बुढ़ियाओं को लेकर डानिंस फ़्लोर पर पहुंच गए थे और अपने बीते दिनों की सुनहरी यादों को ताजा करते हुए थिरकने लगे थे. शम्मीकपूर की तरह थिरकते हुए एक महानुभाव ने आगे बढ़ते हुए कल्लु से नाचने का आग्रह किया. वह भी इसी फ़िराक में था कि उससे एक बार कोई तो कहे. मन की मुराद पूरी हुई और वह भी डासिंग-फ़्लोर पर जा पहुँचा. आरकेस्ट्रा वालों से कभी वह अपने जमाने की पसंदीदा फ़िल्मी गीतों को गाने-बजाने को कहता, तो कभी गोंडी गानों की धुन बजाने को कहता. तरह-तरह की स्टाईल में वह नाचता और साथ ही अभिनय भी करता जाता था. डसिंग-फ़्लोर से सभी नाचने और थिरकने वालों ने अपने नाच बंद कर दिए थे और एक बड़ा सा घेरा बनाए, उसे नृत्य करता देखने लगे थे. बिना रुके वह घंटों नाचता रहा था. उसे नाचता देख कोई युवा-तुर्क सीटी बजा-बज कर उसका उत्साहवर्धन करता और बाकी के लोग तालियां बजा-बजा कर. कभी वह अपने पोते को लेकर नृत्य करता तो कभी हमउम्र के किसी साथी को पकड़कर नाचता. हर आदमी उसकी भाव-भंगिमा को, उसकी थिरकन को लेकर कहता...देखो तो सही....इस उम्र में भी बूढ़ा कैसे-कैसे जलवे दिखा रहा है.

देर रात तक जश्न का माहौल बना रहा था. जब वे घर वापिस लौटे तो रात के तीन बज रहे थे.

अपने परिवार के साथ रहते हुए एक सप्ताह कैसे बीत गया, पता ही नहीं चल पाया. उसे अब बोरियत सी होने लगी थी. दिन भर दौड़-धूप करने वाला आदमी भला एक कमरे में अकेला कितनी देर बैठा रह सकता था?. चिंटू सुबह स्कूल चला जाता है और तीन बजे के करीब लौटता है. बेटा भी साढ़े नौ बजे अपनी नौकरी के लिए निकल जाता है. बहूरानी से बात करने का सवाल ही पैदा नहीं होता. बचा रहता है वह अकेला अपने कमरे में. न तो उसके लिए कोई काम ही बचता है और न ही वह पढ़ना-लिखना ही जानता है. टीव्ही भी देखेगा तो कितनी देर तक देख सकता है? खाना खाकर सिवाय पलंग तोड़ने के वह कर भी क्या सकता है. फ़िर आदमी दिन भर सोता भी कैसे रह सकता है?.

एक दिन. उसने अपने पड़ौसी से बात करना चाहा. पहले तो उसने उसे गौर से देखा और बिना कुछ बोले आगे बढ़ गया था. महानगरों का माहौल ही कुछ ऐसा बन गया है कि एक पड़ौसी अपने दूसरे पड़ौसी को पहचानता तक नहीं है. ऎसे माहौल में भला वह कितने दिन रह सकता है?. वह यह भी नहीं भूला था कि घर में खाना पकाने वाली बाई उसकी थाली में प्रचुर मात्रा में खाना परोसकर उसके कमरे में रख जाती थी. धीरे-धीरे उसकी मात्रा में कमी आने लगी थी. कभी तो उसे भूखा भी रहना पड़ जाता था. शिकायत करें भी किससे करे...क्या ऎसा किया जाना उसे शोभा देगा? क्या यह उचित होगा? यही सोचकर वह चुप्पी साध जाता. एक दिन की बात हो तो सहा जा सकता है, लेकिन लंबे समय तक भूखे कैसे रहा जा सकता है.

शिकायत करे भी तो किससे करे? बेटे से कहता है तो निश्चित ही घर में तूफ़ान उठ खड़ा होगा. अतः चुप रहना ही श्रेयस्कर लगा था उसे.

उसे अब अपनी मित्र-मण्डली की याद भी आने लगी थी. भले ही वह मेहनत-मजूरी का काम करता था, लेकिन अपने लोगों के बीच घिरा तो रहता था. यहाँ न तो कोई बोलने वाला था और न ही बताने वाला. उसने तय कर लिया था कि अब उसे लौट जाना चाहिए. इसी में उसकी भलाई है.

एक दिन सकुचाते हुए उसने अपने बेटे से कहा कि अब वह घर लौट जाना चाहता है. बेटे की मंशा थी कि वह अब साथ में ही रहे. "ऎसी भी क्या जल्दी है पापाजी....मैं चाहता हूं कि अब आप हमारे ही साथ रहें". बेटे ने कहा था. " चाहता तो मैं भी हूँ कि साथ में रहूँ....लेकिन मेरी मजबूरी तुम समझ नहीं पा रहे हो. दिन भर अकेला बैठे रहना मेरे बस का नहीं है. अगर इसी तरह मैं बैठा रहा तो पागल हो जाऊँगा. अब मुझे चले जाना चाहिए. वहाँ मेरी अपनी मित्र-मण्डली है. सुख-दुख के हम साथी रहे हैं, फ़िर बरसों का साथ भी रहा है. दिन और रात कैसे हँसते-हँसाते कट जाते हैं पता ही नहीं चल पाता".

चिंटू ने सुना तो रुआंसा होकर बोला.." दादाजी. अब आप कहीं नहीं जाएंगे...हमारे साथ ही रहेंगे..."

अपने पोते की बात सुनकर उसकी आँखे छलछला आयी थीं. भर्राये स्वर में वह इतना ही बोल पाया था कि अगले साल तुम्हारे जन्म-दिन पर फ़िर चला आऊँगा" कहते हुए वह फ़बक कर रो पड़ा था और उसने उसे अपने सीने से चिपका लिया था.

चिंटु अपने स्कूल गया हुआ था और बेटा नौकरी पर. उसकी गाड़ी दोपहर दो बजे की थी. उसने अपना सामान समेटा और बहू से बोला-" अच्छा बेटी...हम अब चलते हैं".

"ठीक है, जैसी आपकी मर्जी....लेकिन जाने से पहले आप सोने की चेन वापिस देते जाइएगा....वहाँ, कहाँ संभालते फ़िरेंगे आप ?. दिन भर तो आप घर में रहते नहीं हैं...फ़िर किसी ने चुरा ली तो...लाखों का नुकसान हो जाएगा. हाँ...सूट भी वापिस करते जाइएगा....पूरे दिन तो आप कुलियों वाली लाल शर्ट ही पहने रहते हैं...सूट भला क्या पहन पाएंगे...पेटी में पड़े-पड़े कीड़े भी लग सकते है". वह केवल इतना ही बोल पायी थी. ज्यादा कुछ न बोलते हुए भी इसने काफ़ी कुछ बोल दिया था.

बहू की बातें सुनकर सन्न रह गया था वह. उसे इस बात की तनिक भी उम्मीद नहीं थी कि बहू ऎसा कुछ कहेगी. " हाँ..हाँ...क्यों नहीं.. पहले से ही मैंने उन चीजों को अलग रख दिया था ताकि जाते समय लौटा सकूं...सच कहती हो बहू तुम...मेरे लिए ये भला, हैं भी किस काम के". कहते हुए उसने जेब से चेन निकालकर उसकी हथेली पर रखते हुए, सूट का पैकेट टेबल पर रख दिया और अब वह सीढ़ियां उतरने लगा था.

कल्लु अब धीरे-धीरे अपने अतीत की खोल से बाहर निकल रहा था. स्टेशन पर वही चिर-परिचित शोरगुल मचा हुआ था. लोग-बाग अपना सामान इधर से उधर ले जा रहे थे, तो कोई उधर से इधर आ रहा था. रामदीन ने भजिया तल लिया था और अब पूरियाँ निकाल रहा था. शायद कोई ट्रेन आने वाली थी. उसका शरीर अब भी उसी रेलिंग से सटकर बैठा हुआ था. इंजिन की चीखती आवाज और हार्न सुनकर वह अपनी अतीत की गहराइयों से वापिस लौटने लगा था.

अब वह पूरी तरह से बाहर निकल आया था. चैतन्य होते हुए वह उठ खड़ा हुआ. नल पर जाकर उसने मुँह पर पानी की छींटें मारे और कांधे पर टंगे गमछे से मुँह पोछा.

अतीत के अपने कड़ुवे अनुभवों को याद करते हुए उसका मुँह कड़ुवा हो आया था. गला खंगारते हुए उसने आक थू कहते हुए, थूक एक ओर उछाल दिया और अब वह रामदीन की ठिलिया के पास चला आया था. " अरे ओ रामदीन भइया....जरा एक कड़क-मीठी चाय तो बनइयो....बहुत देर हो गई ससुरा, हम चाय नहीं पी पाए"

कड़क मीठी चाय को गले से नीचे उतारते हुए उसने निर्णय कर लिया था कि वह अपने बेटे से साफ़-साफ़ कह देगा कि वह उसे अपने साथ ले जाने की जिद छोड़ दे और वापिस लौट जाए. वह किसी भी कीमत पर उसके साथ नहीं जा पाएगा. वह जैसा भी है, जहाँ भी है सुखी है.

---

(१२)

अपने-अपने आसमान

"बाबूजी ssssss...."

उसकी आवाज मे तल्खी थी. वह चीखकर बोला था. बोलते समय उसके ओंठ कांपे थे. चेहरे पर तनाव की परछाइयाँ साफ़ देखी जा सकती थी. वह तमतमाया हुआ था. उसकी तर्जनी बाबूजी के तरफ़ तनी हुयी थी.

"बाबूजी......बस ! बस बहुत हो चुका. जितना कहना था.....कह चुके. हमें अब समझाने की जरुरत नहीं. बहुत समझा चुके आप. अब हम बच्चे नहीं रहे...हमें अपनी जिन्दगी अपने हिसाब से जीने दें..."

रामप्रसाद का चेहरा फ़क्क पड गया था. आवाज गले में फ़ंसकर रह गयी थी. मुँह खुला रह गया था. वे अवाक थे. अजय के चेहरे पर क्रोध की परतों को कुरेदकर देखने लगे थे. मन में विचारों का तूफ़ान उठ खडा हुआ था. अंदर सब क्षत-विक्षत था. नजारा देखते हुए वे सोचने लगे थे.

"अजय में इतनी हिम्मत कहाँ से आ गयी कि वह अपने पिता से जबान लडाने लगा. भूल गया वह किससे बात कर रहा है. अपने पिता से...... वह भी इस लहजे में... वे अपने आपको टटोलने लगे थे. बोले गए शब्दों को मन ही मन दोहराने लगे थे. याद नहीं पडता कि उन्होंने अपमानजनक शब्दों का प्रयोग किया था. फ़िर एक बाप अपने बेटे से दोयम-दर्जे की बात क्यों कर कह सकेगा. वह तो वही बोलता है, जिसमें उसकी भलाई छुपी हुई होती है....वह उसके लिए कल्याणकारी हो......उसका हितवर्धन करती हो."

उनकी अब तक की जिन्दगी पढने-पढाने में ही बीती है. कितने ही विध्यार्थियों को वे अब तक पढा चुके हैं...कितने ही विध्यार्थी उनके कुशल मार्गदर्शन में पी.एच.डी की उपाधियाँ हासिल कर चुके हैं. अपनी उच्च परम्परा ,कर्तव्यनिष्ठा एवं आदर्श के लिए वे सदैव याद किए जाते हैं. आज भी उन्हें भिन्न-भिन्न विषयों पर आख्यान देने के लिए आदर के साथ बुलाया जाता है.

निश्चित ही अजय के कोमल मन में किसी ने विष-वृक्ष बो दिए हैं. कौन है वह ? क्यों वह उनकी अमन-चैन की जिन्दगी में बवण्डर उठाना चाहता है? क्यों लोग चाहते है कि उनके नीड का तिनका-तिनका बिखर जाए?" तरह-तरह के प्रश्न उन्हें उद्वेलित-व्यथित कर जाते.

अजय के चेहरे से चिपकी नजरें हटाते हुए उन्होंने कामिनी की ओर देखा. वह एक ओर खडी नजारा देख रही थी. उसकी आँखों में एक विशेष चमक थी और होंठों पर कुटिल मुस्कान. वे समझ गए. समझने में तनिक भी देर नहीं लगी. झगडे की जड में शायद इसी का हाथ हो.?

सरस्वती के पुत्र हैं वे, जबकि कामिनी लक्ष्मी की दासी. एक करोडपति बाप की इकलौती संतान. जब सरस्वती और लक्ष्मी में नहीं निभी तो उनके अनुयायी के बीच तालमेल कैसे बैठ सकता है?. लक्ष्मीपुत्रों ने सदा से ही सरस्वती-पुत्रों का मखौल ही उडाया है. मन के कोने में संदेह के बीज पनपने लगे थे.

उन्होंने कातर नजरों से कांता की ओर देखा. वे भी अजय के व्यवहार से नाखुश थी. वह भी स्तब्ध खडी थीं. जुबान होते हुए भी गूंगी. जिंदा होते हुए भी जडवत, पाषाण-खण्ड की तरह.

कांता का मन घडी के पेण्डुलम की तरह दोलायमान हो रहा था. कभी इधर-कभी उधर. वह सोच रही थी., किसका पक्ष लूँ, किसका नहीं. अजय का पक्ष लेती है तो पतिव्रत-धर्म आहत होता है. पति के नजरों में गिर भी सकती है. पति का पक्ष लेती है, तो ममता घायल होती है. दो भागों में बंटी औरत कितनी विवश, कितनी लाचार, कितनी अवश होती है. औरत तो सदा से ही खण्ड-खण्ड होती आयी है.

खण्ड-खण्ड होते हुए भी उसमें दया-ममता-करुणा के विविध स्त्रोत बने ही रहते हैं. सदियों से यह क्रम औरत जात का पीछ करता आया है. उन्हें सब कुछ लुटाना पडता है. यहाँ तक नेह भी, प्यार भी और देह भी. वे तरह-तरह से लूटी जाती रही हैं. लुटने का ढंग भिन्न-भिन्न हो सकता है.

फ़िर उसे कितने ही संबंधों के बीच से होकर गुजरना पडता है. कभी वह दुर्गा बना दी जाती है, तो कभी काली, कभी कुछ और. देवी बनकार आशीर्वाद भी तो लुटाने पडते हैं उसे. जब वह दांव पर चढा दी जाती है तो विवस्त्र भी किया जाता है उसे. कभी वह वैश्या बनाकर कोठे पर बिठा दी जाती है. देह लुटाने के बदले में उसे मिलती है चाँदी की खनक, जो बुढाते देह के साथ ही अपनी चमक खोने लगती है. किस का पक्ष ले कांता, किसका न ले? मन में अब भी चक्रवात सक्रिय था.

अजय के द्वारा कहे गए शब्दों की अनुगूंज अब भी इसके कानों में सुनाई पड रही थी. अजय की बातों से साफ़ झलक रहा था कि उसने अपना रास्ता चुन लिया है. अपना अलग घर बसा लेने का मानस बना लिया है.

माँ सब कुछ सह सकती है. दुनियां के सारे दुख-दर्द उठा सकती है. पर पुत्र वियोग की बात वह सहन नहीं कर सकती. उसका मन राई के दानों की तरह बिखर-बिखर गया था.

पुत्र की कामना ने कितना भटकाया था उसे. कितनी ही मनौतियाँ मांगने, कितने ही देवालयों की चौखट पर माता नवाने, पीर-पैगंबरों की मजारों पर सजदा करने के बाद उसने अजय को पाया था. अजय के लिए उसने अपने दिन का चैन और रातों की नींद सभी कुछ लुटा दिया था.

अपने जीवन का अर्क निचोडकर पिलाया था उसने. उसे संस्कार दिए. समाज में सम्मानपूर्वक जीने का हक दिया. पिता ने भी क्या कुछ नहीं दिया. पिता ने उसे शरीर-जमीन, आश्रय मिला. उसने उसे आसमां में उडने के लिए दीक्षित किया. आसमान से परिचय करवाया. आज वही अजय अपने पिता को धमकाने पर उतर आया. अखिर क्यों......क्यों....?

कांता की नजरें कामिनी के चेहरे पर जा टिकी. रुप में वह खिले हुए कमल की तरह थी ,तो रंग में धुली हुई चांदनी की तरह. कामिनी की आँखों में कौंधती बिजली की चमक और होंठों पर कुटिल मुस्कान देखकर वह अन्दर तक कांप सी गई थी. एक अज्ञात भय मन की गहराइयों तक उतर आया था. कितना भला समझा था उसने कामिनी को. लेकिन वह तो गुड भरी हसियां निकली. उसके मन में कुछ न होता तो वह अजय को अपने दुष्कृत्य के लिए टोकती. उसे मना करती. उसके विरोध में खडी हो जाती. संदेह कुछ-कुछ यकीन में बदलता जा रहा था.

कामिनी नहीं चाहती थी कि उसका पति अपनी माँ का पल्लु पकडॆ-पकडॆ उसके पीछे डॊलता फ़िरे. वह यह भी नहीं चाहती थी कि वह अपने पिता की डुगडुगी की आवाज पर पालतू रीछ की तरह नाचता रहे. वह तो कुछ और ही चाहती थी. वह चाहती थी कि अजय के संग तितली बनकर,हवा की पीठ पर सवार होकर इठलाती-बलखाती डोलती फ़िरे. फ़िर महलों की रहने वाली शहजादी का दम घुटता था कच्चे मकान में. वह चाहती थी कि एक काबिल अफ़सर अपने स्टेटस के मुताबिक रहे. अजय एक हीरा है और वह चाहती थी कि उसे सोने के वृत्त में जडा जाना चाहिए.

इंसाफ़ के तराजू के पडले ऊपर-नीचे होते हुए आखिर थिर हो गए. निर्णय पति के पक्ष में गया. कांता का मौन मुखर हो उठा. जड-देह चैतन्य होने लगी. होंठों पर शब्द फ़डफ़डाने लगे. आँखों में क्रोध उतर आया. अजय को

उसकी औकात बतलाना भी जरुरी था. उसने अजय के गाल पर तडाक से एक चांटा जड दिया. चांटा जडने के साथ ही वह केवल इतना भर कह पायी- "अजय..अब चुप भी कर. क्या अधिकार है तुझे कि तू अपने देवतातुल्य पिता पर उंगली उठा सके. जिस देवता ने तुझे शरीर दिया..... आत्मा दी..... वाणी दी.... तमीज सिखाई..... समाज में सम्मानपूर्वक जीने का हक दिया. तू आज उन्हीं की बेइज्जती करने पर उतर आया". बस...बस इतना ही वे कह पायी थी और उसे गले से लगाते हुए फ़बककर रो पडी थीं.

अजय के अदंर उमड-घुमड रहे विद्रोह का चक्रवात धीमा पडने लगा था. मन पर जमीं अहं की परतें और घमण्ड के हिमकुण्ड पिघलकर आँखों से बह निकले.

कामिनी को समझते देर न लगी. उसे अपना मायाजाल ध्वस्त होता नजर आने लगा. वह सोचने लगी. "मांजी ने क्रोध जता दिया और अपनी ममता का सागर भी उलीच डाला". सारा मामला लगभग शांत होता दिखा. अपनी विफ़लता देखकर वह क्रोध में भरने लगी थी. हारकर भी हार न मानते हुए उसने अपने तरकश में बचा आखिरी तीर, लक्ष्य साधकर चला दिया.

"अजय....खूब अपमान करा चुके तुम अपना और कितना अपमानित होते रहोगे ? क्यों पडॆ हो मेंढक की तरह इस कुएँ में, जिसकी अपनी छॊटी सी सीमा है.? तुम्हें तैरने के लिए तो एक समुद्र चाहिए. क्यों दुबके पडॆ हो अपनी माँ के पल्लु से, जबकि तुम्हें उडने के लिए एक आसमान चाहिए. क्यों घुट-घुट्कर जी रहे हो, जबकि तुम्हें धरती का सा विस्तार चाहिए. ये तुम्हें कुछ नहीं दे सकते. ये दे भी क्या सकते हैं तुम्हें.? इनके पास देने को कुछ बचा भी क्या है.? इन्होंने तुम्हें आदर्शों का मोमजामा भर पहना दिया है. जबकि आज की दुनियां में इसकी कतई जरुरत नहीं है. खोखले हैं वे सारे शब्द. वे कभी के अपनी अर्थवत्ता, अपनी गरिमा, अपनी चमक, सभी कुछ खो चुके हैं. ठीक है...इनके सहारे तुम उस धरातल पर खडॆ तो हो सकते हो, लेकिन आकाश की ऊँचाइयों को कभी नहीं छू सकते. सुनने मात्र में अच्छे लगते हैं ये शब्द. अब भी समय है अजय....जागो!. तुम इस भुरभुरी जमीन पर कैसे खडॆ रह सकते हो?. तुम अब भी सूखे हुए वृक्ष की कोटर में रहना चाहते हो तो रहो. मैं एक पल भी यहाँ ठहरना नहीं चाहती. दम घुटता है मेरा यहाँ. तुम्हें अपमानित होने में मजा आ रहा हो तो शौक से रहो. मैं तुम्हें अपमानित होता हुआ नहीं देख सकती....हरगिज नहीं. मैं आज और अभी, इस घर को छॊडकर जा रही हूँ. तुम चाहो तो मेरे साथ चल सकती हो. बाद में आना चाहो तो, आ सकते हो. तुम्हें मेरी नजरों की कालीन हमेशा बिछी मिलेगी".

तीर लक्ष्य साधकर संधान किया गया था. तीर निशाने पर बैठा था. वह जानती थी कि तीर की तासिर. वह तीर बेहोश करेगा, मगर होश भी बना रहेगा. वह देखेगा भी तो उसे उसका अक्स नजर आएगा. उसे दर्द भी होगा. आह भी निकलगी....पर आह के साथ उसका अपना नाम भी होगा. जानती है वह. वह तीर उसने उसके रुप-यौवन और मद के सम्मिश्रण के घोल में बुझाकर तैयार किया था. एक ऎसे ही तीर का संधान अप्सरा मेनका ने किया था, जिसकी घातक मार का सामना ऋषि विश्वामित्र को भी करना पडा था. उसके होंठों पर एक कुटिल मुस्कान तैरने लगी थी.

“क्या कह रही हो कामिनी तुम ? क्यों हमारे विरोध में अजय को भडका रही हो? क्या हमने तुम्हें पराया समझा?. तुम्हें अपनी बहू नहीं, बेटी माना है हमने. क्या माँ-बाप को इतना भी अधिकार नहीं है कि वे अपने बेटे को डांट भी सकें.? तुम एक माँ-बाप होने का हक हमसे छीनना चाहती हो?” कांता के स्वर में हताशा के भाव सन्निहित थे. बोलते समय उसके होंठ भी कांपे थे.

“मुझे इस विषय में कुछ भी नहीं कहना है और न ही मैं कुछ कहना चाहूँगी.” पैर पटकते हुए वह अपने कमरे में जा समायी और अपना सूटकेस तैयार करने लगी थी.

एक विभाजन-रेखा स्पष्ट रुप से खींची जा चुकी थी. कामिनी जानती थी कि अजय उसके प्रेम-पाश में इस कदर जकडा हुआ है कि देर-सबेर ही सही, उसके पास चला आएगा. अपने हृदय-कमल की पंखुडियों के भीतर, उसने अजय रुपी भौंरे को कैद करके जो रख लिया था.

कामिनी जा चुकी थी. उसे जाते हुए सभी देख रहे थे. रामप्रसाद एवं कांता अपने नीड को उजडते हुए देख रहे थे. वे जानते थे कि कामिनी रोके से रुकने वाली नहीं है. कामिनी के जाते ही एक बडा सा शून्य सभी के मन में उतर आया था.

अजय का दिन का चैन व रातों की नींद छिन गई थी. भूख-प्यास से जैसे उसको कोई नाता ही नहीं रह गया था. वह खोया-खोया सा रहता. बाबूजी समझाते. माँ समझाती. कामिनी को वापिस ले आने की कहते तो वह चुप्पी लगा जाता और कमरे में अपने आपको बंद कर लेता.

माँ अपने पुत्र की हालत देखकर परेशान हो जाती. भला वह अपने पुत्र को दुखी देख भी कैसे सकती थी. जानती थी कि कामिनी जिद्दी है. फ़िर एक करोडपति बाप की इकलौती संतान थी. उसने एक बार जिद पकड ली तो पूरा कराये बगैर वह कब मानती थी. उसके पिता उसकी जिद्द पूरी किये देते थे. माँ-बाप को हक है कि वह अपनी संतान की जिद पूरी करें,लेकिन उन्हें यह बात ध्यान में अवश्य रखनी चाहिए कि जिद कहीं आदतों में शुमार न हो जाएं. नदी को अपनी निर्बाध गति से अवश्य बहना चाहिए. पर यह भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि तटबंध मजबूत हो, अन्यथा वह अपनी उद्दण्डता के चलते बस्तियाँ उजाड देती हैं.

वे नारी स्वतंत्र्यता की प्रबल पक्षधर रही है. स्वतंत्रता कहीं स्वछन्दता में न ढल जाए, इस बात का ध्यान भी माता-पिता को रखना चाहिए. उन्हें समझाना चाहिए कि देह के भीतर और देह के बाहर भी बहुत कुछ होता है.

अजय को उन्होंने संस्कार दिये थे. पता नहीं...कहाँ कोई कमी रह गयी कि बीज ढंग से अंकुरित नहीं हो पाए. रह-रहकर एक बवण्डर सा उठता. रह-रहकर बीती बातें याद आतीं. शादी से पूर्व उन्होंने कामिनी को लेकर जो अंदाजा लगाया था, वह शत-प्रतिशत सच निकला. “संबंध हमेशा बराबरी वालों से किया जाना चाहिए” का सिद्धांत जानते-बूझते हुए, और फ़िर अजय की जिद के चलते उन्हें यह रिश्ता स्वीकार करना पडा था.

शाम को छत पर बैठी कांता सूरज को अस्ताचल में जाता देखती रही थी. ललछौंही किरणों से पीपल के पत्ते संवलाने लगे थे. पक्षियों के दल लौटने लगे थे. वे अपने मुँह में दाना-चुग्गा भर लाई थे, अपने शिशुओं के लिए. दाना-चुगा खिला देने के बाद वे आपस में बतियाने लगे थे. दूर-दूर तक उड कर जाते, फ़िर वापस लौट आते थे. शायद वे अपना कौशल दिखा रहे थे. सूरज अपनी किरणों के जाल को समेटकर पहाड़ के उस पार उतर जाना चाहता था एक सुरमयी अंधियारा सा छाने लगा था. सारे पक्षी उसकी बिदाई में सांध्य गीत गाने लगे थे. बूढे पीपल के देह में झुरझुरी सी भर आयी थी. वह भी तालियाँ बजा-बजाकर पक्षियों का उत्साहवर्धन कर रहा था..

अपनी अंतिम किरण समेट लेने से पूर्व, सूरज इस बात को देखता चला था कि उसका अपना परिवर आनन्दमग्न होकर गीत गा रहा है. सभी खुशी में झूम रहे हैं. वह चाहता था कि इसी तरह सब कुछ चलता रहना चाहिए. वह इस आशा के साथ दक्षिणायन के पथ पर बढ चला था कि जब वह नए रूप में पूरब से उगेगा तो उसे उसका समूचा परिवार, इसी तरह आनन्द में डूबा मिले. हँसता-गाता मिले और पूरे जोश-खरोश के साथ उसका स्वागत करे.

छत पर सुबह-शाम टहलना-बैठना अब कांता की दिनचर्या हो गयी थी. खगोलीय घटना को घटते देख उसे अपार खुशी मिलती थी. पक्षियों की गतिविधियों को बारिकी से देखते रहने में उसे अपार प्रसन्न्ता होती थी. उसे यह जानकर बेहद खुशी हुई थी कि भिन्न-भिन्न प्रजाति के मूक-पखेरु किस तरह आपस में हिलमिल कर रहते हैं. कैसे अपने परिवार को चलाते हैं, जहाँ लडाई-झगडा या फ़िर वाद-विवाद के लिए कोई जगह नहीं होती.

उसने देखा. पक्षियों के बच्चे जब अबोध होते हैं, अपने कोटर में ही रहते हैं. मादा, शिशु को चुगा-दाना देती रहती है. जब उनके पंख उगने शुरु होते हैं, तो वह उन्हें उडना भी सिखलती है. कभी-कभी तो वह अपने शिशु को घोंसले के बाहर धकेल देती है ताकि वे जल्दी उडना सीख जाएं.

बच्चे जब जवान होते हैं तो अपनी पसंद का जीवन-साथी चुनते हैं. जोडा बनाकर ही वे गर्भाधान की प्रक्रिया अपनाते हैं. मादा के गर्भवती होते ही, दोनो मिलकर नीड बनाने में व्यस्त हो जाते है, तिनका-तिनका जोडकर घोंसला बनाया जाने लगता है.

नीड के बनते ही मादा अंडे देती है. उसे सेती है तब तक, जब तक शिशु बाहर नही आ जाता. अब नर पक्षी की ड्यूटी बनती है कि वह मादा की देखभाल करे और उसके उदर पोषण की भी व्यवस्था करे.

उसने एक बात शिद्दत के साथ नोट की थी कि घोंसला केवल एक बार ही बनता है. उसका उपयोग बाद में नहीं होता. जब शिशु जवान होकर घोंसला छॊड चुका होता है , बेलगाम हवा उन घोंसलों को अपने थपेडों से तहस-नहस कर डालती है. अपने उजडते हुए घोंसलों को वे वैराग्यभाव से देखते जाते हैं. घोंसलों के प्रति उनका मोह तब तक बना रहता है, जब तक इनमें उनके बच्चे चहचहाते रहते हैं.. “जिसे एक बार छॊड दिया, उसके प्रति फ़िर मोह कैसा? शायद यह निष्काम-भाव- वैराग्य का भाव,उन्होंने प्रकृति के सांनिध्य में रहकर ही सीखा होगा.

कांता को सूत्र मिल गया था. सूत्र इस प्रकृति की मूक भगवदगीता थी. वहाँ न तो अर्जुन था. न कौरवों की फ़ौज,. न वहाँ कोई मान-समान की भूख थी, न ही अपमानित होने पर प्रतिशोध के लिए धधकती ज्वाली थी, न राज था और न ही ही पाट, वहाँ श्रीकृष्ण भी नहीं थे. होना भी नहीं चाहिए थे. वे वहाँ हो भी कैसे सकते थे. बिना सुने वे गीता का भाष्य सुन चुकी थीं. बिना देखे वे कृष्ण की उपस्थिति का अहसास भी कर चुकी थीं.

कांता ने रामप्रसादजी को छत पर बुलाया. कुर्सी पर बिठाते हुए प्रकृति की उत्तम व्याख्या कह सुनायी. नीड बनाते जोडों व नीड गिराती हवा को प्रत्यक्ष दिखलाने लगी थी.

रामप्रसादजी ने कांता की आँखों में आँखें डालकर भीतर तक झांका. एक नीला, अनंत सागर, अन्दर अपने पूरे विस्तार के साथ फ़ैला हुआ था.

कुछ हद तक असहमत होते हुए भी उन्होंने अपनी सहमती प्रदान कर दी थी. वे इस बात पर सहमत हो गए थे कि अजय को भी अपना नीड बनाने की स्वतंत्रता है. उन्होंने निश्चय कर लिया था कि सुबह होते ही वे अजय को बंधनमुक्त कर देंगे ताकि वह नीलगगन में अपनी उडान भर सके.

बादलों को बलात हटाते हुए एक नया सूरज आसमान के पटल पर मुस्कुराने लगा था.

11…

<u>ये रात फ़िर न आएगी.</u>

(लोक-कथा पर आधारित- रोचक ढंग में)

शरद पुर्णिमा का दिन था. चांद अपने पूरे यौवन के साथ आकाश पटल पर चमचमा रहा था. मौसम बड़ा सुहाना हो गया था. रात के बारह बजे सारा जंगल आराम से सो रहा था. चारों ओर शांति का साम्राज्य था. पॆड़ की एक डाल पर बन्दर और बन्दरिया बैठे जाग रहे थे और दूसरी डाल पर तोता और मैना बैठे हुए थे. यह वह समय था जब पशु-पक्षी एक दूसरे की भाषा समझते थे.

तोता बोला:-“मैना, रात नहीं कट रही है. कोई ऎसी बात सुनाओ कि वक्त भी कट जाए और मनोरंजन भी हो.” मैना मुस्कुराई और बोली:-“ क्या कहूँ आप बीती या जगबीती. आप बीती में भेद खुलते हैं और जगबीती में भेद मिलते हैं”. तोता होशियार था, बोला-“ तुम तो जगबीती सुनाओ”. मैना ने कहा:-“ आज की रात एक चमत्कारी रात है. आज ही के दिन चन्द्रमा से अमृत बरसेगा. अमृत की कुछ बूंदे

कमलताल में भी गिरेगी, जिससे इसका पानी चमत्कारी गुणॊं से युक्त हो जाएगा. यदि कोई प्राणी आधी रात को इस कमलताल में कूद जाए तो आदमी बन जाएगा.". तोता बोला- ":क्या सचमुच में ऎसा हो सकता है". मैना ने कहा :"जो प्रेम करते हैं, वे सवाल नहीं पूछते, भरोसा करते हैं".तोते ने मैना से कहा " तो फ़िर देर किस बात की. चलो हम दोनो तालाब में कूद पड़ते हैं और आदमी बन जाते हैं". मैना ने कहा," अरे तोता, हम पंछी ही भले. अभी तू आदमी के फ़ेर में नहीं पड़ा है, इसलिए चहक रहा है. हम अपनी ही जात में बहुत खुश हैं."

तोता-मैना की बातें बन्दर और बन्दरिया ने सुनी तो चौंक पड़े. अधीर होकर बन्दरिया ने बन्दर से कहा -" साथी आओ..कूद पड़ें." बन्दर ने अंगड़ाई लेते हुए कहा- "अरे छोड़ रे सखी, हम ऎसे ही खुश हैं. एक डाल से दूसरी और दूसरी से तीसरी पर छलांग मारते रहते हैं. पेड़ों पर लगे मीठे-मीठे फ़ल खाकर अपना गुजर-बसर करते हैं. न घर बनाने की झंझट और न ही किसी बात की चिन्ता. हमें क्या दुख है. अपने दिमाक से आदमी बनने का ख्याल निकाल दे". बन्दरिया आह भर कर बोली-" ये जीवन भी कोई जीवन है? मैं तो तंग आ गई हूँ इस जीवन से. मुझे यह सब करना अच्छा नहीं लगता. आदमी की योनि में जन्म लेकर मैं दुनियां के सारे सुख उठाना चाहती हूँ . देखो, मैंने अपना मन बना लिया है और मैं अब तालाब में कूदने जा रही हूँ. यदि तुम मुझसे सच्चा प्यार करते हो तो मेरा साथ देना होगा. मैना की बताई घड़ी बीतने वाली है, सोच क्या रहे हो, आओ पकड़ो मेरा हाथ और कूद पड़ो ". बन्दरिया की बात सुनकर बन्दर हिचकिचाने लगा. बोला-" तुम भी मैना की बातों में आ गयी. पानी में तो कूद पड़ेगे, लेकिन किसी जहरीले सांप ने काट लिया तो मुफ़्त में जान चली जाएगी". बन्दरिया समझ गयी कि बन्दर साथ न देगा. घड़ी बीतने ही वाली थी. बन्दरिया चमत्कार देखने के लिए उत्सुक थी, झम्म से कमलताल में कूद पडी. आश्चर्य, बन्दरिया की जगह वह सोलह साल की युवती बन गई थी.

उसके रुप से चांदनी रात जगमगा उठी. डाल पर बैठे बन्दर ने जब उसका अद्भुत रूप देखा तो पागल हो उठा. उसने तत्काल फ़ैसला लिया कि वह भी कमलताल में कूदकर आदमी बन जाएगा. उसने डाल से छलांग लगाया और तालाब में कूद पड़ा, लेकिन वह शुभ घड़ी कभी की बीत चुकी थी. वह बन्दर का बन्दर ही बना रहा.

दिन निकला. थर-थर कांपती युवती, सूरज की गुनगुनी धूप में अपना बदन गर्माने लगी थी. तभी संयोग से एक राजकुमार उधर से आ निकला. उसने उस रुपवती युवती को देखा तो बस देखता ही रह गया. उसने अपने जीवन में इतनी खूबसूरत युवती इसके पहले कभी नहीं देखा थी. देर तक अपलक देखते रहने के बाद, वह उसके पास पहुँचा और अपना उत्तरीय उतारकर उसके कंधो पर डाल दिया. फ़िर अपना परिचय देते हुए कहा – "-हे सुमुखी...सुलोचनी..मैं इस राज्य का राजकुमार हूँ और शिकार खेलने के लिए इस जंगल में आया हूँ. इससे पहले मैंने तुम्हें यहाँ कभी नहीं देखा. तुम्हें देखकर यह नहीं लगता की तुम इस लोक की

वासी हो. हे ! त्रिलोक सुन्दरी बतलाओ, तुम किस लोक से इस धरती पर अवतरित हुई हो और तुम्हारा क्या नाम है ?”.

एक अजनबी और बांके युवक को सामने पाकर वह शर्म से छुईमुई सी हुई जा रही थी. शरीर में रोमांच हो आया था. सोचने –समझने की बुद्धि कुंठित सी हो गई थी. वह यह तय नहीं कर पा रही थी कि प्रत्युत्तर में क्या कहे.? क्या उसे यह बतलाए कि कुछ समय पूर्व तक वह बन्दरिया थी और अर्धरात्रि में इस कमलताल में कूदने के बाद, एक सुन्दर-सुगढ युवती बन गई है? देर तक नजरें नीचे झुकाए वह मौन ओढ़े खड़ी रही.

राजकुमार ने मौन को तोड़ते हुए कहा:-“ मैं भी कितना मुर्ख हूँ, जो ऎसे-वैसे सवाल पूछ बैठा. मुझे यह सब नहीं पूछना चाहिए था. देवी माफ़ करें. मेरी एक छॊटी सी विनती है, उसे सुन लीजिए. तुम्हारी यह कमनीय काया जंगल में रहने योग्य नहीं है. तुम्हारे ये नाजुक पैर उबड़-खाबड़ और कठोर धरती पर रखने लायक नहीं है. फ़िर जंगल के हिंसक पशु तुम्हें देखते ही चट कर जाएंगे. मैं नहीं चाहता कि तुम उनका शिकार बनो. तुम्हें तो किसी राजमहल में रहना चाहिए. तुम कब तक इस बियाबान जंगल में यहाँ-वहाँ भटकती रहोगी. मेरा कहा मानो और मेरे साथ राजमहल में चली चलो. मैं दुनिया के सारे वैभव, सुख-सुविधाएँ तुम्हारे कदमों में बिछा दूँगा. तुम्हें अपनी रानी बनाकर रखूँगा. पूरे राजमहल में तुम्हारा ही हुक्म चलेगा. देर न करो और चली चलो मेरे साथ”.

“शायद सच कह रहे हैं राजकुमार, अब यह कमनीय काया जंगल में रहने लायक नहीं रह गई है. उसे यह भी नहीं भूलना चाहिए कि अब वह बन्दरिया नहीं, एक नारी बन गई है और एक नारी को अपना तन ढकने के लिए कपडॆ चाहिए, फ़िर तन सजाने के लिए आभूषण चाहिए. अब वह पॆड पर नहीं रह सकती. उसे रहने को घर चाहिए और भी वह सब कुछ चाहिए,जिसकी सुखद कल्पना एक नारी करती है. यह ठीक है कि उसका मन अब भी अपने प्रिय में रम रहा है, लेकिन वह उसकी आवश्यक्ताओं की पूर्ति नहीं कर सकता. उसे तो अब चुपचाप राजकुमार का कहा मानकर उसके साथ हो लेना चाहिए इसी में उसकी भलाई है”. यह सोचते हुए उसने राजकुमार के साथ चलने की हामी भर दी थी. घोडॆ पर सवार होने के पहले उसने अपने प्रिय को अश्रुपुरित नेत्रों से देखा और हाथ हिलाकर बिदा मांगी.

बन्दर ने देखा कि उसकी प्राणप्रिया राजकुमार के साथ जा रही है, तो उसने उन दोनो का पीछा किया. कहाँ घोडॆ की रफ़तार और कहाँ बन्दर की दुड़की चाल. भागता भी तो बेचारा कितना भागता.? दम फ़ूलने लगा था. आँखों के सामने अन्धकार नाचने लगा और अब मुँह से फ़ेस भी गिरने लगा था आखिरकार वह बेहोश होकर गिर पड़ा.

संयोग से उधर से एक महात्मा निकल रहे थे. वे त्रिकालदर्शी थे. बन्दर को देखते ही सारा माजरा समझ गए. उन्होंने अपने कमण्डल से पानी लेकर उसके मुँह पर छींटॆ मारे. बन्दर को होश आ गया. होश में आते ही बन्दर फ़बक कर रो पड़ा और उसने महात्माजी से अपना दुखड़ा कह सुनाया. महात्मा ने उसे धीरज

बधांते हुए कहा कि तुम्हें अपने साथी पर भरोसा करना चाहिए था. यदि तुम भरोसा करते तो ये दिन न देखने पड़ते. खैर जो होना था, सो हो चुका. अब तुम किसी मदारी के साथ हो लो. कुछ दिन बाद तुम्हें तुम्हारी प्रियतमा मिल जाएगी.

संयोग से उधर से एक मदारी आ निकला. उसने बन्दर को पकड़ लिया. अब वह गाँव-गाँव, शहर-शहर करतबें दिखलाता घूमने लगा. एक दिन वह उस राज्य में जा पहुँचा. नियमानुसार उसे राजमहल जाकर अपनी कला का प्रदर्शन करना था. रस्सी से बंधे अपने प्रेमी को देखते ही वह खुशी से उछल पड़ी. उसने मदारी को पास बुलाया और मुँहमांगी कीमत देकर खरीद लिया. अब वह दिन भर उसके साथ बना रहता. वह जहाँ-भी जाती, उसे अपने साथ ले जाती. रसीले मीठे-मीठे फ़ल खिलाती. खूब बतियाती. उसे खिला-खिला देखकर राजकुमार की आशा बलवती होने लगी थी कि साल बीतते ही वह उसके साथ शादी रचा लेगी. देखते ही देखते पूरा साल कब बीत गया किसी को पता ही नहीं चल पाया.

पूनम की वह अनोखी रात का दिन भी आ गया. चांद अपने पूरे यौवन के साथ आकाश पटल पर चमचमा रहा था. उस समय कमलिनी अपने प्रेमी बन्दर के साथ अटारी पर बैठी हुई थी. दोनो प्रेमी गले में हाथ डाले उस अद्‍भुत रात का आनन्द उठा रहे थे. संयोग से तोता-मैना कहीं से उड़ते हुए आए और राजमहल की अटारी पर बैठ गए. तोते ने मैना से कहा:- “कितनी सुहानी रात है. ऎसी रात में भला किसे नींद आती है. तुम कोई ऎसी बात सुनाओ, जिससे समय भी कट जाए और मनोरंजन भी हो”.. मैना बोली:-“ आप सुनाऊँ या जगबीती. आप सुनाने में भेद खुलते है और जगबीती सुनाने में भेद मिलते है” तोता होशियार था बोला:- “तुम तो जगबीती ही सुनाओ”.

मैना बोली:-“ तुम्हें याद है अथवा नहीं, यह तो मैं नहीं जानती. बात पिछले साल की है. ऎसी ही चमत्कारी रात थी. उस दिन एक पेड़ की डाल पर बन्दर और बन्दरिया जाग रहे थे. मनुष्य़ तन पाने के लिए बन्दरिया पानी में कूद पड़ी और देखते ही देखते एक सुन्दर युवती में बदल गयी. बन्दर ने जब यह चमत्कार देखा तो वह भी पानी में कूद पड़ा था,लेकिन वह अद्‍भुत घड़ी बीत चुकी थी. वह बन्दर का बन्दर ही बना रहा. संयोग से युवती बनी बन्दरिया को उसका पुराना प्रेमी मिल तो गया है लेकिन अलग-अलग योनियों में जन्म लेने से उनका मिलन संभव नहीं हो सका. आज की रात भी अद्‍भुत रात है. **ऎसी अनोखी रात फ़िर कभी नहीं आएगी.** यदि कोई आधी रात के समय कमलताल में कूद पड़े, तो मनचाही योनि प्राप्त कर सकते हैं.” इतना कहकर दोनों उड़ गए.

तोता और मैना की बातें सुनकर बन्दर बहुत खुश हुआ. उसका अपना मनोरथ शीघ्र ही पूरा होगा, यह सोचकर वह खुशी के मारे वह उछल-उछलकर नाचने लगा. उसे उछलता-कूदता देख कमलिनी को बेहद आश्चर्य हो रहा था. उसने पूछा कि आखिर क्या बात है जो इतना उछल-कूद कर रहे हो. बन्दर ने चहकते हुए कहा:- “सुना तुमने, मैना क्या कह रही थी”.

“क्या कह रही थी मैं भी तो सुनूं?” कमलिनी ने पूछा.

'" कह रही थी कि यदि कोई इस कमलताल में कूद पड़े तो मन चाही योनि प्राप्त कर सकता है. मैं चाहता हूँ कि तुम कमलताल में कूद पड़ो और फ़िर से बन्दरिया बन जाओ. इस तरह हमारा फ़िर से मिलन हो सकता है." बन्दर ने अति उत्साहित होते हुए कहा.

उसकी बात सुनते ही वह खिलखिलाकर हंस पड़ी और तब तक हंसती रही थी, जब तक बेदम नहीं हो गयी. बन्दर समझ नहीं पा रहा था कि उसके हंसने के पीछे क्या कारण हो सकता है. उसने अधीर होकर उसका कारण जानना चाहा.

"तुम्हारी बेवकूफ़ी भरी बातों को सुनकर केवल हंसा ही जा सकता है और मैंने वही किया है. सच कहा है किसी ने कि बन्दर बेवकूफ़ होते हैं. उनमें अकल केवल इतनी सी होती है...इतनी सी. उसने अपनी तर्जनी के पोर पर अपना अंगूठा रखते हुए कहा था. तुम मुझे सलाह देने वाले कौन होते हो कि मैं कमलताल में जाकर कूद जाऊँ और बन्दरिया बन जाऊँ और पेट की भट्टी की आग को बुझाने के लिए तुम्हारे साथ जंगल-दर-जंगल भटकती रहूँ. आज मेरे पास क्या नहीं है. धन है, दौलत है, राजमहल है, नौकर-चाकर हैं और इससे भी बढ़कर मुझ पर अपनी जान छिड़कने वाला वाला राजकुमार है, जो आज नही तो कल इस राज्य का राजा बन जाएगा और मैं महारानी. अरे बुद्धु....मानव तन बड़ी मुश्किल से मिलता है. मैं इतनी बेवकूफ़ नहीं कि तुम्हारे खातिर, फ़िर उसी योनि में चली जाऊँ.? जरा ठंडॆ दिमाक से सोचो, तुम और मैं साथ तो है, भले ही तुम बन्दर की योनि में हो, इससे क्या फ़र्क पड़ता है अतः मेरी मानो मेरे साथ बने रहो, अच्छा खाओ-पियो और ऎश करो और एक कोने में पड़े रहो." कमलिनी ने कहा.

कमलिनी की बातें सुनकर उसका माथा चकराने लगा . उसने सपने में भी नहीं सोचा था कि वह इस तरह से उसके प्यार को ठुकरा देगी. उसे गुस्सा भी बहुत आ रहा था, लेकिन वह जानता था कि गुस्सा करने से विवेक बोथरा हो जाता है और फ़िर बनता काम भी नहीं बन पाता. यह सच है कि वह अब भी उससे उतना ही प्यार करता है, जितना की वह पहले भी करता आया था और हर हाल में उसका साथ छोड़ना नहीं चाहता था. वह तो अपने खोए हुए प्यार को पुनः प्राप्त करना चाहता है. अब उसका दिमाक काफ़ी तेजी के साथ उस ओर सोचने पर मजबूर हो गया था,जिससे वह कमलिनी को पा सकता है.

काफ़ी सोचने और विचार करने के बाद उसके दिमाक में एक योजना आयी, जिसके बल पर वह सफ़ल हो सकता था.

वह राजकुमार के पास जा पहुँचा और निवेदन करते हुए कहने लगा:-"राजकुमारजी, मैं जानता हूँ कि आप कमलिनी से बेहद प्यार करते हैं और उससे शादी भी करना चाहते हैं. वह भी कुछ ऎसा ही चाहती है, लेकिन उसे आपकी यह सूरत अच्छी नहीं लगती, इसलिए उसने आपसे एक साल बाद विवाह करने की बात कह कर, आपके प्रस्ताव को टाल दिया था. मैं एक ऎसा उपाय जानता हूँ, जिससे आप अपना चेहरा सुन्दर बना सकते हैं." इतना कहकर वह चुप हो गया था और इस बात का इंतजार करने लगा था कि उसकी बातों ने राजकुमार पर कितना असर डाला है.

राजकुमार को लगा कि बन्दर शायद ठीक ही कह रहा है. उसने अधीर होकर बन्दर से उस उपाय के बारे में विस्तार से जानना चाहा. बन्दर ने एक सांस में सारी योजना कह सुनाई.

दोनो मध्य रात्रि में पहाड की उस चोटी पर जा पहुँचे ,जहाँ से उन्हे कमलताल में छलांग लगानी थी. अब बन्दर ने राजकुमार से कहा:-" आप अपनी आँखें बंद कर लीजिए और हाथ जोडकर प्रार्थना करते हुए उन वाक्यों को दुहराते जाएं जैसा कि मैं कहता जाऊँ".

राजकुमार ने अपनी आँखें बंद कर ली और प्रार्थना की मुद्रा में अपने हाथ जोड लिए. बन्दर ने कहना शुरु किया:-" हे प्रभु ! आपने नारद मुनि को हरि का रुप दिया था, कृपया वही रुप मुझे देने की कृपा करें".बन्दर के कहे वाक्यों को दुहराते हुए राजकुमार ने ताल में छलांग लगा दिया. अब बन्दर की बारी थी. उसने कमलताल में कूदने से पहले कहा कि वह राजकुमार बनना चाहता है, कहकर कूद पड़ा. आश्चर्य राजकुमार बन्दर बन गया था और वह राजकुमार.

राजकुमार ने जब अपना बदला रुप देखा तो फ़ूट-फ़ूटकर रोने लगा. बन्दर से राजकुमार बने युवक ने कहा:-" अब रोने धोने से कुछ होने वाला नहीं है. आपने जो रुप मांगा था, वह आपको मिल गया है. अब केवल एक ही उपाय शेष है कि या तो आप मेरे साथ राजमहल चला चलें अथवा जंगल की ओर निकल जाएं.